CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अ॰ ८२१५

साहित्य सङ्गीत सेना पद्धति

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-५

-ग्रन्थालय
ौंदी, वाराणसी-५
अ॰ ८२१५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जी ब्रजवासी

...ग्रन्थालय,

करौलां

...ी-5

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

...ग्रंथालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

ब्रज भूषण संगीत सेवा मंडल, मथुरा

दो शब्द

लोक नायक भगवान श्रीकृष्ण की पावन क्रीड़ा-स्थली "ब्रज-भूमि" सदैव से ही साहित्य, संगीत एवं कला से मंडित रही है। इस पुण्य भूमि के अंक में फलित एवं पल्लवित होने वाला साहित्य संगीत सेवा भी इस गौरवमय अतीत की मधुर स्मृति संजोये है। इतिहास के पृष्ठों का अवलोकन करने पर विदित होता है कि "अष्टछाप" के महापुरुषों की साहित्य एवं संगीत साधना सर्वमान्य तथा भारतीय संस्कृति के लिये एक विशेष दैन रही है।

इस उत्कृष्ट एवं सनातन साहित्य-संगीत सेवा पद्धति को प्रस्तुत पुस्तक के रूप में श्री बच्चू जी ने अपने अकथ परिश्रम द्वारा साहित्य-संगीत अनुरागी सज्जनों तक पहुँचाने का जो प्रयास किया है वह भारतीय साहित्य-संगीत की प्रगति की दिशा में एक नया कदम है। विगत कई वर्षों से आप श्री द्वारिकाधीश मन्दिर में श्री शालिगराम जी की सेवा तथा प्रातः एवं सायंकाल में वीणा तथा सितार वादन द्वारा प्रभु सेवा साधना करते आ रहे हैं। कई वर्ष तक आपने किशोरी रमण बालिका विद्यालय में सितार वादन को शिक्षण के रूप में भी कार्य किया है तथा इससे पूर्व भी कई पुस्तकें इस सम्वन्ध में प्रकाशित हो चुकी है।

—प्रकाशक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस पुस्तक के प्रकाशन में मथुरा जनपद विश्राम घाट पर सेठ श्री हीरालाल जी पेड़ा वालों के पुत्र सेठ श्री श्यामलाल जी पेठे वाले, गतश्रम नारायण में तत्पुत्र श्री द्वारिकाप्रसादजी गुप्ता (व्रजवासी मिठाई वाला) मोन्टरोड मद्रास ७००००२ ने जो सहयोग प्रदान किया है, मण्डल उनका हृदय से आभारी है।

Forward

It gives me great pleasure in testifying this

work of Shri Bachchoo Ji who is in the forefront of Dhrupad type of Indian classical music in this book, he has emphasised the ancient practice and theory which he himself has adopted since pretty long. I strongly uphold views expressed in this volume. I feel that this work will prove immensely useful in the world in music.

M. G. GOKHALE
Officiating Head of Deptt.
Civil Engg.
P. M. V. Polytechnic, Mathura.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राक्कथन

नन्दनन्दन भगवान श्रीकृष्ण की लोक रजनी लीलाओं की क्रीड़ा-स्थली "व्रजभूमि" का अलौकिक महत्व भी अपने आप में एक रहस्य है। उनके अमर वेणु-वादन को श्रवण करने के लिये श्रुतियों को भी गोपियों के रूप में यहाँ अवतरित होना पड़ा। इस पुण्य भूमि की गोद में अनेक सन्तों में से 'अष्टछाप" के महापुरुषों ने जो साहित्य, संगीत की सेवा की है। यह भारत के इतिहास में कीर्तिमान के स्वरूप में आज भी अमर है। इस साहित्य संगीत, के प्रयोग स्थलों को "हवेली संगीत" नाम से आकाश वाणी द्वारा सुनने को मिलता है।

यही १५ दिसम्बर १९६९ मथुरा, वृन्दावन के आकाशवाणी कला केन्द्र में संगीत 'सम्मेलन के प्रथम आयोजन समय श्रोताओं के मध्य 'हवेली संगीत" नाम पर प्रश्न सूचक शंका हुई, और वही विलीन हो गई। इससे यह प्रेरणा मिलने में सेवक को सेवा करने का प्रयत्न बना, जो विद्युज समाज के मध्य एक चिन्तन का विषय बना आ रहा है।

१६वीं शताब्दी के मध्य महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी ने 'पुष्टि सम्प्रदाय' में साहित्य एवं संगीत सेवा की स्थापना की। १६०२ में अष्टछाप साहित्य संगीतज्ञों की स्थापना करके गो० विठ्ठलनाथ जी ने सन् १६३७ में यह संगीत सेवा अपने सात पुत्रों में विभक्त कर दी। इन स्थलों को "सप्तगृह एवं सप्तपीठ" नाम से कहे गये। यह देव स्थान स्थित न रह सके। औरंगजेब के आक्रमण के समय हिन्दू राजाओं की संरक्षणता में ले जाया गया और घरेलू रूप से साहित्य एवं संगीत सेवा को "हवेली संगीत" नाम से पुकारा गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यह दैन हजारों लाखों भक्त, कवि, संगीतज्ञों के सहित सेवक को भी किंचित सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ, अथवा गो० वृजभूषणलाल जी महाराज एवं स्वामी पार्वतिकर जी जैसे सन्तों की अनुकम्पा से बड़े-बड़े आकाशवाणी कला केन्द्रों की भावना से स्पष्टता हुई।

भारतीय संगीत कला के आदर्श में जिस कीर्तन के आधार पर संगीत की मान्यता एवं जानकारी होती थी। वह कीर्तन संगीत सम्बन्धी पुस्तकों में कीर्तन का परिचय नहीं, जब कि कीर्तन के कारण ही संगीत के नाम का प्रचार हुआ।

यों तो वेद, पुराण आदि ग्रन्थों में संगीत शास्त्र का विवेचन उपलब्ध है। किन्तु संगीत को भगवत सेवा का अंग बनाने का श्रेय इसी सम्प्रदाय को प्राप्त है।

भारतीय संगीत इस कीर्तन की प्राचीनता में "अष्टछाप" के भक्तों ने प्रभु सेवा लीला महत्व पर लाखों पद की रचना कर गायन किया, जो भारतीय संगीत की दैन बनी, जिसे प्रत्येक भाषा के द्वारा भगवान श्रीकृष्ण लीलाओं का वर्णन घर-घर में अथवा कला के महत्व में गाया जाने लगा; वही भारतीय संगीत त्रिवेणी सर्व व्यापी हुई, इस साहित्य संगीत की प्रमाणिकता के सहित उन गायक भक्तों का जीवन चरित्र और सेवा का महत्व प्रयोग करने को दिया है। ताकि हम अपनी प्राचीनता से अनविज्ञ न रहें।

जिसे हमारे स्वतन्त्र राष्ट्र ने युगों से पिछड़ी हुई संगीत कला को फिर से पुनः जीवन निर्माण करने में भारतीय मान्यता के साथ संगीत की शिक्षा विभाग द्वारा अनवार्य बनाया है। जिसे भुलाया नहीं जा सकता है।

—लेखक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारतीय साहित्य संगीत सेवा पद्धति

१. प्राक्कथन ... ...
२. ब्रजभूषण संगीत मण्डल के दो शब्द ... ...
३. भारतीय संगीत का शास्त्रीय विवरण १
४. कलयुग में कीर्तन का महत्व २
५. ध्रुवपद उपाधी का विवरण ३
६. कीर्तन में ध्रुवपद गायन ४
७. कीर्तन में साहित्य, संगीत की पूर्णता ५
८. ब्रजभाषा में साहित्य का महत्व ६
९. अष्टछाप की साहित्यक भावना ७
१०. ब्रजभाषा में साहित्य, संगीत की मान्यता ... ८
११. वार्ता साहित्य के प्रमुख विद्वान ८
१२. कीर्तन में साहित्य, संगीत के गायक ९
१३ कीर्तन साहित्य के शोधकर्ता १०
१४. ब्रज की साहित्य; संगीत सेवा पद्धति ११
१५ ब्रज साहित्य संगीत के संस्थापक महाप्रभु, श्री वल्लभाचार्यजी २२
१६. ब्रज में अष्टछाप के संस्थापक गो० विठ्ठलनाथ जी २५
१७ श्री कुम्भनदास जी की गायन वार्ता २७
१८ श्री सूरदास जी की गायन वार्ता ३१
१९. श्री परमानन्ददास की गायन वार्ता ३६
२०. श्री कृष्णदास की गायन वार्ता ३९
२१ श्री गोविन्द स्वामी की गायन वार्ता ४३
२२. श्री छीतस्वामी की गायन वार्ता ४९
२३ श्री चतुर्भुजदास की गायन वार्ता ५१
२४. श्री नन्ददास की गायन वार्ता ५२
२५. श्री रसखान की गायन वार्ता ६०
२६. श्री तानसैन की गायन वार्ता ६२
२७. रामदत्त पार्वतीकर जी की गायन; वादन वार्ता ... ६५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ब्रजभूषण संगीत मण्डल, मथुरा

१—श्री बालकृष्ण जी करांची वाले, रामदास की मण्डी मथुरा ।
२—श्री कीर्तिपाल जी, सुख संचारक कं०, मथुरा ।
३—श्री बिहारीलाल जी मीतल, रामदास की मण्डी मथुरा ।
४—श्री चन्द्रभान जी सर्राफ, चौक बाजार मथुरा ।
५—श्री बाँकेलाल जी बजाज, नया बाजार मथुरा ।
६—श्री कृष्णमुरारी अग्रवाल, मनमोहन रिंग मर्चेन्ट्स, मथुरा ।
७—श्री विद्याधर गोपालप्रसाद जी, भरतपुर दरवाजा, मथुरा ।
८—श्री गंगाचरण जी वर्मन, राजाधिराज बाजार मथुरा ।
९—श्री देवेन्द्रकुमार (एडवोकेट) गऊघाट मथुरा ।
१०—श्री निवास सर्राफ, होली दरवाजा, मथुरा ।
११—श्री चन्द्रकिशोर जी, आचार्य डी० ए० वी० कालेज, मथुरा ।
१२—श्री मोतीलाल जी शोरा वाले, लाल दरवाजा मथुरा ।
१३—मूलचन्द्र जी ठेकेदार, घीया मण्डी मथुरा ।
१४—श्री किशनलाल जी मालपानी, राजाधिराज बाजार मथुरा ।
१५—श्री गिर्राजमल बजाज, राजाधिराज बाजार मथुरा ।
१६—श्री जगदीश अग्रवाल, लाल दरवाजा मथुरा ।
१७—श्री आनन्द कुमार सर्राफ, चौक बाजार मथुरा ।
१८—श्री कानबिहारी जी बजाज, नया बाजार, मथुरा ।
१९—श्री गौरीशंकर सर्राफ, होली दरवाजा मथुरा ।
२०—श्री किशनलाल सर्राफ चौक बाजार, मथुरा ।
२१—श्री पं० श्री निवास जी, स्वामी घाट, मथुरा ।
२२—श्री गोविन्द राम जुगल बाबू, नया बाजार, मथुरा ।

(श्री कन्हैयालाल जी करांची वालों की संरक्षणता में यह छपी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारतीय संगीत साहित्य का शास्त्रीय विवरण

भारतीय संगीत कला की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में विभिन्न मत हैं। किन्तु सनातन संस्कृति के अनुसार संगीत की उत्पत्ति वेदों से है। जिसका प्रयोग युगों के धर्मानुसार होता आ रहा है। साहित्य जगत का कर्ता अक्षर ब्रह्म है। इसमें सर्वशक्ति नाद ब्रह्म है जो प्रत्येक जीवात्मा में सर्व व्यापक है। यह साहित्य संगीत जन कल्याण मार्ग का प्रशस्त कर्ता एवं मानव जीवन का अभिन्न अंग है। इसलिये इसे पंचमवेद भी कहा जाता है।

"नाट्य वेदस्तु पंचम"

भारतीय मान्यता के अनुसार सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलयुग इन चारों युगों के साथ संगीत शास्त्र का प्रचार एवं प्रसार होता रहा है। मानव का परम लक्ष्य भगवत सेवा ही है। जो युग धर्मानुसार स्वर रचना से प्रयोग का भी कारण बना।

युग के धर्मानुसार स्वर प्रयोग

१. सतयुग—सतयुग में जप, तप, ध्यान, योग, अर्चना आदि को एक स्वर में, एक स्वर होकर, एक स्वर की जाति में संलग्न था। यह एक आर्चिक स्वर का गान कहलाता है।

२. त्रेतायुग—इसमें जप, तप. हवन, यज्ञ आदि में दो स्वर के गायन का प्रयोग होता था। यह गाथिक जाति कहलाता है। इसमें शब्दों का निर्माण संयुक्त गाथाओं से हुआ हैं।

३. द्वापर युग—इसमें उपासना पद्धति में सामगान का विशेष महत्व था। इस गान की ध्वनि में उदात्त, अनुदात्त और स्वरित तीन स्वरों का प्रयोग था। अतः यह सामिक जाति का गान कहलाता है।

४. कलयुग—कीर्तन उपासना पद्धति में संकीर्तन एवं लोक ध्वनि के चार प्रयोग को स्वरान्तर जाति का गान कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कलयुग कीर्तन गान

सप्त स्वरों की सम्पन्नता से भगवत लीला भावना में पद-पदान्त में द्विपदी, त्रिपदी, चतुस्पदी एवं अष्टपदी आदि के गान गाये जाते हैं। कीर्तन को सप्त स्वर जाति में (१) आर्चिक, (२) गाधिक, (३) सामिक, (४) स्वरान्तर, (५) औड़व, (६) षाडव, (७) सम्पूर्ण स्वरों के नियमानुसार प्रत्येक साहित्य प्रयोग होता है। जिसमें अनेकों राग-रागनियों की रचना अनुसार भक्तों की सेवा प्रभु के कीर्तन में प्रयुक्त हुई। यही कीर्तन गायन कह जाता है। श्रीमद् भागवत में व्यास जी ने भी कलयुग में कीर्तन गायन को भगवत प्राप्ति का एक मात्र साधन स्वीकार किया है।

कृते यद्धयायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्य्यायां कलौ तद्धरि कीर्तनात् ॥

इस प्रकार भारतीय संगीत में कीर्तन गायन प्रयोग को सम्बोधित किया गया है। इस वैदिक संगीत को नियमबद्ध करने का श्रेय आचार्य भरत को है। जिन्होंने कीर्तन के स्वरूप में भाव, राग ताल और रस आदि का समन्वय किया है।

लेकिन परवंती विद्वानों ने संगीत परिभाषा में गायन-वादन और नृत्य इन तीनों के एकीकरण को पुष्ट किया है। जैसे गायन में नाद ब्रह्म और शब्द ब्रह्म का समावेष रहता है। यदि प्रयोग किया जाय तो चारों शास्त्रों का समिश्रण है। यदि गायन में भाव का स्पष्टीकरण नहीं है तो वह गायन नहीं केवल वादन मात्र है।

इस प्रकार के अन्तर भेदों से भरत शिदान्त के चारों नियमों की प्रमुखता है वस्तुतः (१) वेद से साहित्य, (२) वेद से ध्वनि, (३) वेद से लय ताल, (४) वेद से राग-रस आदि का उल्लेख है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इन नियमों के अनुसार पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन गायन के रूप में ध्रुवपद को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है।

ध्रुवपद नाम की व्याख्या

भारतीय साहित्य एवं संगीत गायन प्रणाली में ध्रुवपद नाम का भी एक विशेष स्थान है। ध्रुवपद नाम की उत्पत्ति एवं इसके प्रचलन के प्रश्न पर भी आज के विद्वानों में गहरा मतभेद है। कुछ लोग ध्रुवपद गायन को ८वीं शताब्दी से मानते हैं और कुछ १४वीं शताब्दी से। कुछ लोग घरानों की परम्परा से भी इसका सम्बन्ध जोड़ते हैं। कुछ ध्रुवपद की विशेषता आलाप करने को ही कह देते हैं और कुछ ध्रुवताल के नाम से भी मान्यता देते हैं। इस प्रकार ध्रुवपद को लेकर कितनी ही विचारधाराऐं प्रचलित हैं।

ध्रुवपद गायन भाव-राग-ताल-रस में विशेषता भावों के रचनात्मक महत्व पर है। ध्रुव-पदादि की रचना का प्रचलन अति प्राचीन है। ध्रुवपद नाम से वेदों में भी पद शब्द की पदावलियाँ हैं। श्रीमद भागवत के एकादश स्कंध में विभूतियों के वर्णन में कहा गया है कि "पदानि छन्द सामहम" अर्थात भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से विभूतियों का वर्णन करते समय कहते हैं कि छन्दों में पद मेरी विभूतियाँ हैं।

व्याकरण द्वारा पदगतौ धातु से पद शब्द की स्थिति होती है। उसमें पद-गति के चार अर्थ होते हैं। पद, ज्ञान, मोक्ष, गमन और प्राप्ति को कहा गया है। पद शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, जैसे चरण, पद, ओहदा, स्थान आदि। नीति शास्त्र के जानकार गौतम मुनि ने भी कहा है कि जिस प्रकार वेद अनादि हैं उसी प्रकार पद भी अनादि हैं।

इस प्रकार ध्रुवपद के नाम का स्वरूप वर्णन अति विशाल है। यह अनादि काल से चला आ रहा है। इसके परिचय में जितना भी कहा जाय वह थोड़ा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कीर्तन में ध्रुवपद गायन का महत्व

भारतीय साहित्य संगीत के अन्तर्गत कीर्तन सेवा में ध्रुवपद गायन की परिभाषा देते हुए भरत मुनि ने भाव, राग, ताल और रस की प्रचुर मात्रा पर बल दिया है :—

१. भाव—ध्रुवपद गायन में पद गायन का महत्व होता है इसके शब्द भावों की आवंतन क्रिया अति उत्तम गति में प्रयोग होते हैं। प्रयोग में भाव के शब्दों को छोड़ कर गाना अशुद्ध माना गया है इसलिये गायन में शुद्ध भाव की मान्यता है।

२. राग—ध्रुवपद गायन में ध्वनि एवं राग-रागिनी का स्थान महत्वपूर्ण है। गायन में जब भाव रूपी साहित्य का प्रयोग ध्वनि रूपी राग-रागिनी में होता है तब उस स्वर समुदाय को राग एवं रागिनी कहते हैं। इसमें अन्य गायकी की तरह आश्रित स्वर जैसे मीड़, सूत, घसीट, तान, मुल्की आदि का प्रयोग नहीं होता है। इसलिये इस गायनि को शुद्ध स्वरों की गायकी कहते हैं।

३. ताल—ध्रुवपद गायन में लय-ताल का प्रयोग भी सराहनीय है। जब भाव रूपी साहित्य का उच्चारण ध्वनि रूपी रागिनी के प्रेम में उदय होता है, उस समय दोनों की गति को समानता रखने वाली नियमावली को ताल कहते हैं। भाव के प्रेम रूपी बन्धन की मान्यता को कायम रखना यही लय-ताल का मुख्य स्वरूप है।

४. रस—गायन के भाव में उदय होने वाली कला को रस कहते हैं। नवरसों के अनुसार रति से रस को गायन द्वारा ग्रहण करना यह शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक सभी कार्यों में प्राप्त होता है। आनन्द की पराकाष्ठा का नाम रस है।

उक्त चारों बातों की पूर्णता ही ध्रुवपद के गायन की विशेषता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कीर्तन साहित्य संगीत की पूर्णता

'अष्टछाप' के सभी महानुभाव साहित्यकार एवं संगीतज्ञ थे। उन्होंने कीर्तन में गायन-वादन एवं नृत्य सभी का पूर्णता से समावेश किया है। वे सभी कलाओं के ज्ञाता थे। उन्होंने अनेकों भाव रचना के साथ गायन का प्रादुरभाव प्रत्येक राग में स्वयं लिपिवद्ध करके गायन किया। जो प्रणाली कीर्तन गायन के लिये रची गयी थी, उसे प्रत्येक राग-ताल में तुरन्त गायन की पूर्णता आज के प्रत्येक श्रेष्ठ कीर्तनकार में विद्यमान हैं। उनके अनेकों पद भावों का समयानुसार राग-ताल को बदल कर स्वर लिपि के साथ प्रयोग किया जाता है। उनकी गायन कला का विकास प्रत्येक गायकी के लिये लाभदायक रहा और गायन की नवीन धाराऐं प्रवाहित हुईं।

श्रीकृष्ण चरित्र के भाव का दिग्दर्शन, रासलीला द्वारा प्रभु के साकार रूप में हुआ। जिससे अनेकों वैष्णव भक्त उन लीलाओं का अनुकरण कर सके। यही आगे चलकर रूपान्तर नाटक आदि के रूप में छाया चित्रों का विकास हुआ।

भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार हमें अपने जीवन उद्देश्यों के साथ इस कला को ग्रहण करना चाहिए जिससे स्वयं के आचरणों पर सुप्रभाव पड़ता हो। इन बातों का ध्यान रखते हुए हमें अपनी प्राचीन परम्परा को कायम रखना है। यही हमारे जीवन का उद्देश्य रहे ताकि हम अपने स्वधर्म को सुरक्षित रख सकें और भावी पीढ़ी उसका लाभ उठा सके।

इस प्रकार प्रत्येक साहित्य संगीत के गुणधर्मों का आचरण तीन प्रकार से है:—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१. सुपरिणामक गायन—जिसमें सत्य गुण का स्मरण शुद्ध अंतःकरण द्वारा होता है एवं जिसके अर्थ भाव से शारीरिक एवं मानसिक प्रोत्साहन के साथ आत्म संतोष प्राप्त होता हो।

२. दुष्परिणामक गायन—जो शारीरिक एवं मानसिक गति में विकलता तथा आधि उपाधि उत्पन्न करके दुर्व्यसनों को उत्तेजित करने वाला हो। वह विद्यार्थियों और ग्रहस्थों को ऐसे गायन नहीं सुनने चाहिए।

३. सामान्य गायन—जिसके द्वारा शारीरिक तथा मानसिक वृत्ति पर कोई अच्छा-बुरा प्रभाव न पड़े।

ब्रजभाषा साहित्य का महत्व

भारतीय साहित्य के इतिहास में 'अष्टछाप' के पूर्ववर्ती कवियों में जयदेव, विद्यापति और चंडीदास ने क्रमशः संस्कृत, मैथिली और वंग भाषा में कृष्ण चरित्र का वर्णन महत्वपूर्ण किया। ब्रजभाषा की दृष्टि से 'अष्टछाप' के कवियों की रचना उक्त कवियों से भिन्न है। विशेषकर सूरदास ने तो कृष्ण लीला चरित्र के गायन को धार्मिक एवं साहित्यक जगत में मौलिक रूप में प्रस्तुत किया है।

यह निम्न तथ्यों से प्रकट होता है:—

१—जयदेव के काव्य में संगीत लहरी और कोमल कान्त पदावली की गौरवता है, किन्तु सूरदास की तरह कथन की विविधता नहीं।

२—विद्यापति ने राधा और कृष्ण को नायक-नायिका भेद के रूप में प्रस्तुत किया है किन्तु सूरदास की तरह राधा कृष्ण के चरित्र को अलौकिक धरातल पर स्थापित नहीं कर सके हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. चण्डीदास ने राधा कृष्ण के साहित्य में विशुद्ध प्रेम का दर्शन कराया है। किन्तु सूरदास जैसी लीला भावना का प्रभाव नहीं है।

इससे यह स्पष्ट है कि 'अष्टछाप' के कवि व गायक अपने कला-कौशल के लिये परम्परागत कवियों के ऋणी नहीं हैं। लेकिन उनके काव्य में पूर्ववर्ती कवियों के गुण अवश्य विद्यमान हैं। जिनका अनुकरण अन्य कवियों ने भी किया है।

'अष्टछाप' की साहित्यिक भावना

'अष्टछाप' के साहित्य में वात्सल्य दाम्पत्य रति और भगवत रति इन तीनों का भाव प्राधान्य है। जिसमें श्रृंगार रस का पूर्ण साहित्य है। अधिकांश रचना पदों में हुई है। यह पद भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं से सम्वन्धित होने के कारण कथन की दृष्टि से अपने आप में स्वयं परिपूर्ण हैं। यह रचना भाव मुक्तक कहलाती हैं। जो प्रवन्ध काव्य से निम्न और स्फुट शैली से कठिन होती है। इसमें भगवत सेवा का गायन विधि पूर्वक संगीत की शास्त्रीयता से वड़ी अनुपम रीति में प्रयोग होता है।

इस साहित्य के रचयिता प्रथम तो भगवान के अनन्य भक्त, द्वितीय उच्चकोटि के कवि तथा संगीतज्ञ थे। यही कारण है कि उनके द्वारा प्रणीत साहित्य विकसित रूप में हिन्दी साहित्य का अद्वितीय साहित्य बन सका।

काव्य परिमाण और विषय विस्तार की दृष्टि से इनकी रचनाओं में विभिन्नता प्राप्त होती है। 'अष्टछाप' साहित्य का सर्वोत्तम भाग सूर-काव्य पर आश्रित है। कुम्भनदास, नन्ददास, परमानन्ददास आदि की रचना भी महत्वपूर्ण हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

ब्रज भाषा को साहित्यिक मान्यता

भारतीय ब्रज भूमि के साहित्य एवं संगीत का ऐतिहासिक वार्ता का महत्व अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। केवल पुष्टि सम्प्रदाय को ही नहीं वल्कि अन्य सम्प्रदायों के विद्वानों का ध्यान भी इस ओर आकर्षित हुआ है। महाप्रभु वल्लभाचार्य एवं उनके द्वितीय पुत्र गो० विठ्ठलनाथ तथा उनके चतुर्थ पुत्र गो० गोकुलनाथ जी जिन्होंने वार्ता साहित्य की पुनर स्थापना में गो० हरिराम जी ने भी इस साहित्य के साथ संस्कृत साहित्य की भी सम्वृद्धि की। जिसकी उपयोगिता से प्रभावित होकर देश-देशान्तर के अनेक विद्वान इस ओर आकर्षित हुए हैं, तथा अभी भी अनेक विद्वान शोध कार्य में संलग्न हैं।

इस ब्रज भूमि के साहित्य संगीत उत्थान का श्रेय तृतीय पीठाधीश्वर गो० श्री ब्रजभूषणलाल जी महाराज के कार्य को है। जिन्होंने भारतीय विद्या विभाग काँकरौली राजस्थान की स्थापना करके अनेक ग्रन्थों का संकलन एवं प्रकाशन करके शोधकर्ताओं के लिये प्रशस्त पथ प्रदान किया है।

इस विषय के विशेषज्ञों तथा शोधकर्ताओं का विवरण नीचे दिया गया है।

वार्ता साहित्य के प्रमुख विद्वान

१—श्री कण्ठमणि शास्त्री, विद्या विभाग काँकरौली (संस्कृत विद्वान)
२—श्री द्वारिकानाथ पारिख, काँकरौली (वार्ता साहित्य)
३—श्री गोकुलानन्द जी तैलंग (पुष्टि साहित्य के लेखक) काँकरौली
४—श्री छोंगालाल जी (साहित्य सेवा मुखिया) काँकरौली
५—श्री ब्रजकिशोर जी व्यास, राधा दामोदर मन्दिर, मथुरा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६—श्री मोहनलाल जी मुखिया (सेवा, वार्ता) मथुरा
७—श्री हरेकृष्ण व्यास, मथुरा
८—श्री निरंजनदेव जी (वार्ता साहित्य) मथुरा
९—श्री लड़ेतीलाल जी भण्डारी, मथुरा
१०—श्री वासुदेव जी, चतुर्वेदी, मथुरा
११—श्री सवलकिशोर जी प्रधानाचार्य, माथुर चतुर्वेद विद्यालय
१२—श्री चन्दूलाल जी मुखिया, द्वारिकाधीश मन्दिर, मथुरा
१३—श्री श्याम सुन्दर जी आचार्य, द्वारकेश विद्यालय, मथुरा
१४—श्री मनहर (छोटेलाल जी) शास्त्री, हनुमान गली, मथुरा
१५—श्री धीरजलाल जी शास्त्री, मथुरा
१६—श्री वल्लभ किशोर जी शास्त्री, मथुरा
१७—श्री राजा बाबू वर्मन, मथुरा

ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा

१—श्री जवाहरलालजी चतुर्वेदी, मथुरा
२—श्री प्रभुदयाल मीतल, मथुरा
३—श्री राधेश्याम जोशी मथुरा
४—श्री वृन्दावनदास जी (अध्यक्ष ब्रज साहित्य मंडल) मथुरा
५—श्री उत्तमराम जी शुक्ल
६—श्री मूँगा जी, मथुरा
७ - श्री दाऊदयाल गुप्ता, मथुरा

ब्रज के भक्ती साहित्य के विद्वान

१—श्रीजी बाबा मथुरा
२—श्री देवीध्वज जी गोकुल
३—श्री कैलाशचन्द्र जी आचार्य
४—श्री लक्ष्मणजी शास्त्री मथुरा
५—श्री जगन्नाथी चतुर्वेदी
६—श्री वृजभूषण जी चतुर्वेदी
७—श्री पं० लक्ष्मीनारायण जी
८—श्री गोपीनाथ जी व्यास
९ -श्री नवनीत आचार्य नागर
१०—श्री उमाशंकर दीक्षित
११—स्वामी राम कृष्ण
१२—श्री नन्दाकशोरजी पाठक.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वार्ता साहित्य के शोधकर्ता

१—डा० श्री हरिवंशलाल जी शर्मा, एम. ए. पी. एच डी. लिट्			
२ डा० श्री वासुदेव शरण जी अग्रवाल	,,	,,	
३—डा० श्री गोवर्धन नाथ जी शुक्ल	,,	,,	अलीगढ़
४—डा० श्री दीनदयाल जी गुप्ता	,,	,,	इलाहाबाद
५—डा० श्री श्यामसुन्दर जी	,,	,	कलकत्ता
६—डा० श्री सोमनाथ जी	,,	,,	वाराणसी
७—डा० श्री चन्द्रभान जी रावत	,,	(जी वाजी) वि.वि.	
८ डा० श्री नन्द दुलारे जी	,,	,,	वाराणसी
९—डा० श्री व्रिज रत्नदास जी	,,	,,	बनारस
१०—डा० श्री किशोरीलाल जी गुप्ता	,,	,,	बनारस
११—डा० श्री कृष्ण वल्लभ जी शर्मा	,,	,	जतीपुरा
१२—डा० श्री सरोजनी कुलश्रेष्ठ	,,	,,	मथुरा
१३—डा० श्री हरिनाथ जी टंडन	,,	,,	आगरा
१४—डा० श्री स्नेहलता श्रीवास्तव	,,	,,	अलीगढ़
१५—डा० श्री राजकुमारी मीतल	,,	,,	मथुरा
१६—डा० श्री विजय कुमारी	,,	,,	हाथरस
१७—डा० श्री श्यामसुन्दर दीक्षित	,,	,,	मथुरा
१८—डा० श्री अम्बालाल जी व्यास	,,	,,	वड़ौदा
१९—डा० श्री रूप नारायण जी	,,	,,	बड़ौदा
२०—डा० श्री सत्येन्द्रनाथ जी	,,	,,	आगरा
२१—डा० श्री बरसानेलाल जी	,,	,,	मथुरा
२२—डा० श्री बलदेव जी उपाध्याय	,,	,,	काशी
२३—डा० श्री शंकरलाल चतुर्वेदी	,,	,	मथुरा

—०—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साहित्य संगीत सेवा पद्धति

भगवान की सेवा के वृत्तान्त का साहित्य एवं संगीत भारतीय परम्परा में बड़े विशाल रूप में विद्यमान हैं। अनेकों वैष्णव भक्त इस सेवा से गुजरते आ रहे हैं। जिसमें कि अनेकों कीर्तन ध्रुवपद गायन द्वारा भगवान को सेवा करके ज्ञान, मोक्ष, गमन की प्राप्ति का सौभाग्य पाया है। इस सेवा पद्धति का अलौकिक विवरण संक्षिप्त रूप में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। जिसके द्वारा हमारे वान्धव संसार में रहकर भगवत सेवा का लाभ लिया जा सका है। समयानुसार इन भावों में राग-रागिनी का प्रयोग करके भगवत सेवा का भाव नीचे स्पष्ट दिया है।

आदि नाद अनहद भयौ, जाते उपजो वेद ।
पुन पायौ या वेद तें–सकल सृष्टि को भेद ॥

प्रभु सेवा पद्धति

(१) सर्व प्रथम वीन व सरस्वती वीणा वादन होता है।
(२) शंख ध्वनि के बाद में पद गायन से प्रभू को जगाया जाता है।

आम्नाय–ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१. प्रथम गुरु वन्दना (राग भैरव)

श्रीबल्लभ चरण शरण जाय सब सुख तू लहिएरे ।
रसना गुण गाय गाय, दरशन प्रसाद पाय
और काज त्याग भाग बल्लभ गति गहिएरे ।
रैन दिनाँ चिन्तित रहो, श्रीवल्लभ, श्रीविठ्ठलेश
इन्हहिं के रूप रंग इन्हहिं रस वहिरे ।
श्री विठ्ठल गिरधारी यह रस नि वहो भारी,
रसना जो चाहत है, याहि चाहिएरे ।

२. जगाने का पद (राग भैरव)

जागिए गोपाल लाल, आनंद-निधि नंद-बाल,
जसुमति कहै बार-बार भोर भयौ प्यारे ।
नैन कमल-दल विसाल, प्रीति-वापिका-मराल,
मदन ललित-वदन ऊपर, कोटि वारि डारे ॥
सुनत वचन प्रिय रसाल, जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल-जाल, दुख-कदम्ब टारे ।
त्यागे भ्रम-फन्द-द्वन्द, निरख कै मुखार विंद,
"सूरदास" अति अनन्द मेंटे मद भारे ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३. कलेऊ के पद (राग रामकली)

कलेऊ कीजिये नंदलाल ।
खीर खांड़ माखन और मिश्री लीजैं परम रसाल ।
औट्यौ दूध सद्य धौरी को तुमकों दैहों लाल ।
बेनी बढ़े होई बलि की सी पीजिये मेरे बाल ।
हों वारी या बदन कमल पर चुम्बन देहो गाल ।
'गोविन्द' प्रभु कलेऊ कीनों जननी वचन प्रतिपाल ।

४. यमुना जी पद (रागभैरव)

श्री यमुनाजी यह प्रसाद हो पाऊँ ।
तिहारे निकट रहों निस वासर रामकृष्ण गुन गाऊं ।
मंजन करौ विमल जल पावन चिंता कलह बहाऊं ।
तिहारी कृपा ते भानुकी तनया हरिपद प्रीति बढ़ाऊं ।
विनती करों ये ही वर माँगों अधम संग बिसराऊं ।
परमानंद प्रभु सब सुखदाता मदनगोपाल लड़ाऊं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५. भक्तन के पद (राग भैरव)

दीनन दुख हरन देत सन्तन हितकारी ।
मूढ पापी सरन आयो कृपा करौ मुरारी ।
अजामील गीध व्याध इनमें कहो कौन साधु,
पक्षी हू पद पढ़ात गनका सी तारी ।
तन्दुल देत रीज जात साग पत्र सौ अगाध,
गिनत नाय घूठे बेर खाटे मीठे खारी ।
ध्रुव के सिर छत्र देत प्रहलाद कौ उबार लेत ।
भक्त हेतु बाधों स्वेत लंक पुरी जारी ।
गज कौं जब ग्राह ग्रसौ दूसाषन चीर खस्यौ,
सभा वीच द्रोपदी श्री कृष्ण को पुकारी ।
इतने में हरी आय गये वचनन आरूढ़ भये,
'सूरदास' द्वार ठाड़ो आधरो भिकारी ।

६. मंगल भोग धरने का पद (राग विभास)

करत कलेऊ दोऊ भैया ।
रोटी तोर सान माउन में मिश्री मेल खवावत मैया ।
काचौ दूध सद्य धौरी को तातौकर मध प्यावत मैया ।
कर अचवन वीरो लै ब्रजपति पाछें चले चरावन गैया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७. मंगला दर्शन में अष्टपदी (राग भैरव)

मंगल मंगलं व्रज भुवि मंगलं ।
मंगल मिह श्रीनंद यशोदा नाम सुकीर्तन मेत
द्रुच्चिरोत्संग सुलालित पालित रूपं ॥१॥
श्रीश्री कृष्ण इतिश्रुति सारं नाम स्वार्त जनाशय
तापाहम यह मिति मंगल रावं
व्रज सुन्दरी वयस्य सुरभी वृन्द मृगी गण
निरुपमं भावा मंगल सिन्धु चयाय ॥२॥
मंगल मीषद्युत युत मीक्षण भाषण मुन्नुत
नासा पुट गति भुक्ता फल चलन ।
कोमल चल दंगुलि दल संगत वेणु निनाद
विमोहित वृन्दावन भुवि जाता ॥३॥
मंगल मखिलं गोपी शितुरति मंथर गति
विभ्रम मोहित रास स्थित गानं ।
त्वं जय सततं श्री गोवर्धनधर पालय निज दासान् ।४।

८. मंगला दर्शन में आरती के पद

मंगल आरती गुपाल की माई ।
नित प्रति मंगल होत निरख मुख
चितवन नयन विशाल की ॥
मंगल रूप श्यामं सुन्दर कौ,
मंगल भृकुटी सुभाल की ।
चतुर्भुज प्रभु सदा मंगल निधि,
बानिक गिरधर लाल की ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९. श्रृंगार समय के पद (राग बिलावल)

करत श्रृंगार मैया मन भावत ।
शीतल जल उष्ण कर राख्यौ,
ले लालन कौ बैठ न्हवावत ।।
अंग अंगोछ चौकी बैठावत,
प्रथम ही तनियाँ पहिरावत ।
देखो मेरे लाल और सब बालक,
घर घर ते कैसे बन आवत ।।
सूरदास प्रभु खेलत आँगन,
लेत बलैया मोद बढ़ावत ।।

१०. ग्वाल के पद (राग बिलावल)

खेलन जाओ ग्वाल सब टेरत ।
यह सुन कान्ह भये अति सुन्दर द्वारे तन फिर २ जबटेरत ।
बार बार हरि मातहि बूझत कहि चौगान कहाँ है ।
दधि मथनि के पाछें देखो लै मैं धरो तहा में ।
ले चौगान अपने कर प्रभु आये घर ते बाहर ।
'सूरदास' बूझत सब ग्वालन खेलौगे किहिं ठाहर ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

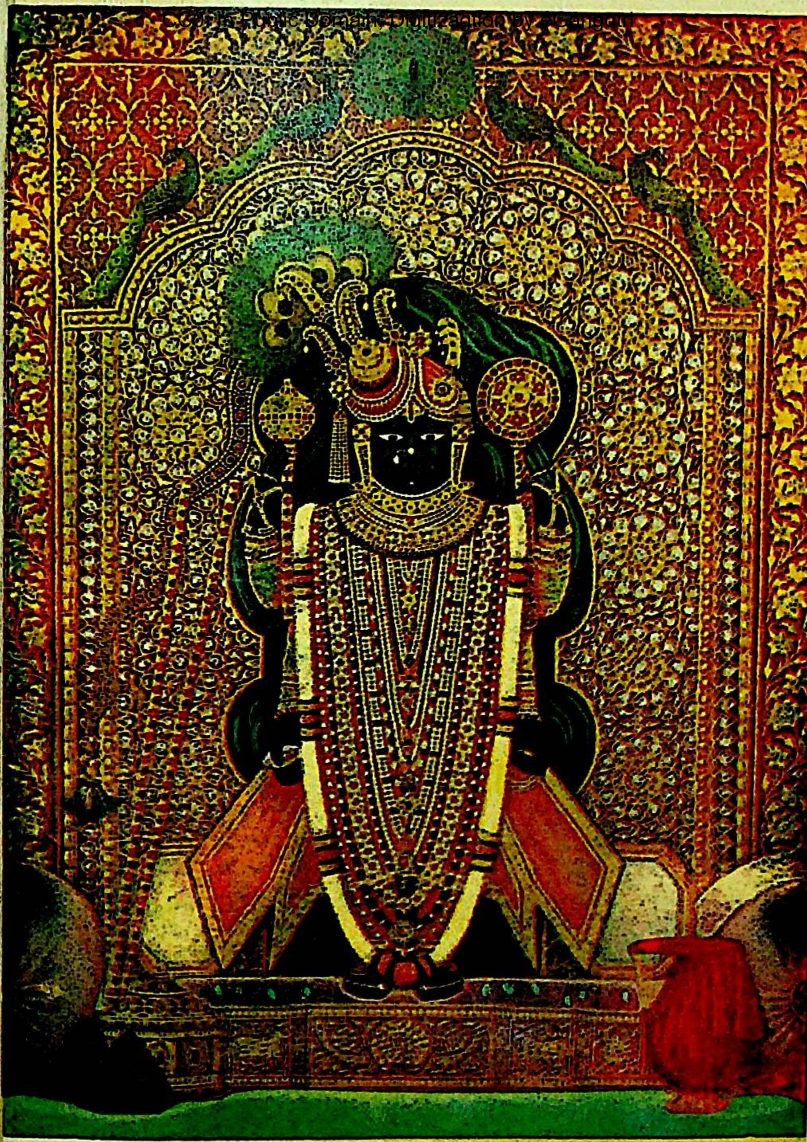

No. 1443 श्री द्वारकानाथजी S.S P.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

११. राजभोग में भोजन का पद (राग धनाश्री)

भोजन कों बोलत महतारी ।

बल समेत आओ मेरे मोहन, बैठे हैं नंद परोसें थारी ।

खीर सिरात स्वाद नहिं आवत बेगि ग्रास तुम लेहों मुरारी ।

हितवत चित नींके कर जैमों पाछें कीजै खेल बिहारी ।

अहो सुबल अहो श्रीदामा बैठौ नेंक कहा मन हारी ।

'परमानन्ददास' कौ जीवन मुख व्यंजन दै जाउ बलिहारी ।

१२. राजभोग सरवे को पद (राग सारंग)

भोजन कर उठें दोऊ भैया ।

हस्त पखार शुद्ध अचवन कर वीरी लेउ कन्हैया ।

माँत यशोदा करत आरती पुनि पुनि लेत बलैया ।

'परमानन्ददास' कौ ठाकुर ब्रज जन केलि करैया ।

१३. भोजन के बाद वीरी का पद (राग सारंग)

पान खवावत कर-कर वीरी ।

इक टक व्है मोहन मुख निरखत पलकन परत अधीरी ।

हँसत निहारत बदन श्याम कौ तन की सुधि बिसरीरी ।

रसिक प्रीतम के अंग संग मिलि छतिया भई अति सीरी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४. राजभोग में पद (राग सारंग)

सूर आयौ सिर तर छाया आई पाँयन तर ।
पक्षी सब झुक रहे देख छाँह गहेरी ।
धंधी जन धंध छाँड़ रहेरी धूपन के लिये ।
पशु-पक्षी जीव जन्तु चिरिया रहिरी ।
ब्रज के सुकुमार लोग दै-दै किवार सोवें ।
उपवन की ब्यारतामें पौढ़ें पिय-प्यारी ।
'सूर' अलबेली चल काहे कुँ डरात है ।
माघ की मध्यरात जैसें जेठ की दुपहरी ।

संध्या कालीन सेवा

१. उत्थापन दर्शन का पद (राग नट)

लाड़िले यह जल जिनहिं पियौ ।
जब आरोगत तब भर लाऊँ तातौ डार दियौ ।
उठौ मन मोहन वदन पखारौ सुन्दर लोट लियौ ।
तुम जानत हम अबही पोढ़े पहर द्यौस रह्यौ ।
सुन मृदु वचन श्याम उठ बैठे मान्यौ मात कह्यौ ।
'परमानंद' प्रभु यह सुख भूखे मैया मेवा दियौ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२. भोग दर्शन में पद (राग नट)

भलैई मेरे आयेहो पिय टीक दुपहरी की विरियाँ।
शुभ दिन शुभ नक्षत्र शुभ महूरत शुभ पल छिन शुभ घरियाँ।
भयो ये आनंदकंद मिटौ विरह दुख द्वन्द चंदन घिस अंग
लेपन और पायन परियाँ।
'तानसैन' के प्रभु माया कीनी मोपर सूकी वेल हरी हरियाँ।

३. संध्या आरती दर्शन में पद (राग गौरी)

आरती वारत राधिका नागरी।
तन कनक थार भूषण दीपक किये रत्न।
कमल मुक्तावली मंगल उजागरी।
तृणित कटि मेखला शुभग घंटा वेली झालर शंख।
जै जय करत उजारी।
अनुराग छत्र अंचल चमर नयन चल भाव कुसुमांजली।
चतुर गुण आगरी सखी यूथन लिये विविध भोजन।
किये सुखद गिरवर धरन रिझावत सुहागरी।
'विष्णुदास' स्वामी पय श्री वल्लभ पद पदान मत
'कृष्णदास' बड़ भागरी।

४. सयन भोग में व्यारू का पद (राग कल्याण)

ाड़िले बोलत है तोय मैया।
झा समय गोधन संग आवत चुम्बन लेकर गोद बिठैया।
धु मेवा पकवान मिठाई दूध भात और दार बनाई।
रमानन्द' करत वियारू यशुमति देखि बहुत सुख पाई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५. दूध पीने का पद (राग कान्हरा)

दूध पियौ मन मोहन प्यारे ।
बल-बल जाऊँ गहेरु जिन कीजौ कमल नयन अँखियन के तारे ।
कनक कटोरा भर पीजै सुख दीजै संग लेउ बलभद्र भैया रे ।
'परमानंद' मोहि गोधन की सौं उठत ही प्रातः करूँ धैया रे ।

६. सयन भोग सरने का पद (राग कान्हरा)

भोजन कर उठे दोऊ भैया ।
हस्त पखार शुद्ध अचवन कर वीरी लेउ कन्हैया ।
मात यशोदा करत आरती पुन पुन लेइ बलैया ।
'परमानंददास' कौ ठाकुर ब्रज जन केलि करैया ।

७. वीरी के पद राग (कल्याण)

कृष्ण कों वीरी देत ब्रजनारी ।
पान सुपारी काथौ गुलाबी लोंगन कील संवारी ।
ब्रज नारी जो कुँजलौ ठाड़ी कंचन की सी थारी ।
ले ले वीरी कर कमल में ठाड़ी करत अनुहारी ।
कहति लाड़िले वीरी लीजै मोहन नन्दकुमार ।
'परमानन्द' प्रभु वीरी अरोगत ब्रज के प्राणाधार–

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८. सयन का पद (राग कल्याण)

मेरे तो श्री गिरधर ही गुण गान ।
यह मूरत खेलत नयनन में यही हृदय में ध्यान ।
चरण रेणु चाहत मन मेरो यह दीजै वरदान ।
'कृष्णदास' कौ जीवन गिरधर मंगल रूप निधान ।

९. पौढ़ने का पद (राग विहाग)

सोवत नींद आइ गई श्याम हो ।
मेंहर उठी पौढ़ाय दोऊ अन कों आप लगी ग्रहकाम हो ।
व्रजरत है घर के लोगन कों लै-लै हरि के नाम हो ।
गाढ़े बोल-बोल ना पाये कोई सोए मोहन बलराम हो ।
'सूरदास' प्रभु ब्रह्म सनातन सो सोवत नन्द धाम हो ।

आसरे का पद (राग विहाग)

तरैहटी गोवर्धन की रहिए ।
नित प्रति मदन गोपाल लाल के चरन कमल चित लहिये ।
तन पुलकित ब्रज रज में लोटत गोविन्द कुण्ड में नहिये ।
रसिक प्रीतम हित चित की बातें श्री गिरधारी सों कहिये ।

तत्पश्चात प्रभु के पौढ़ाने में ललिता जी वीणा सुनाती थीं । इस भाव से वीन सरस्वती वीणा के द्वारा प्रभु को पौढ़ाया जाता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साहित्य संगीत के संस्थापक महाप्रभु वल्लभाचार्य

जीवन वृत्तान्त:—महाप्रभु वल्लभाचार्य के पूर्वज दक्षिण मे गोदावरी के तटवर्ती ग्राम कांकरवाड़ के निवासी तथा भारद्वाज गोत्र के तैलंग ब्राह्मण थे। आपके पिता का नाम श्री लक्ष्मण भट्ट था श्री लक्ष्मण भट्ट वड़े विद्वान तथा धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। वे अपनी पत्नी के साथ तीर्थयात्रा करनें के लिये दक्षिण से उत्तर में आये। और प्रयाग गया आदि तीर्थों का भ्रमण करने के उपरान्त काशी मे रहने लगे।

काशी में रहते आपको कुछ ही समय व्यतीत हुआ था, कि एक दिन यह अफवाह सुनने में आयी; कि दिल्ली का बादशाह काशी पर आक्रमण करन वाला है। फिर क्या था अपनी सुरक्षा के लिये सब लोग वहाँ से भाग निकले। उस समय लक्ष्मण भट्ट की पत्नी गर्भवती थीं। वे उनको उसी अवस्था में लेकर अपने साथियों के साथ चल दिये। सब लोग चलते-चलते वर्तमान मध्यप्रदेश के रायपुर जिले के चम्पाहरण वन में होकर निकले। अन्य सभी साथी तो निकटवर्ती चौड़ा नगर में विश्राम के लिये चले गये; पर पत्नी को अत्यधिक प्रसव वेदना के कारण आपको उसी वन में ठहरना पड़ा। उसी रात को उनकी पत्नी ने एक विशाल पेड़ के नीचे सात मास के बालक को जन्म दिया। बालक पैदा होते ही कुछ संज्ञाहीन सा जान पड़ा। अतः पत्नी द्वारा आपको यही सूचना दी गयी; कि उन्होंने एक मृत बालक को जन्म दिया है। आपने उसे वहीं पत्तों से ढक कर छोड़ दिया और अपने साथियों के समीप चौड़ा नगर चले गये।

अगले दिन सुबह यह समाचार सुना गया कि काशी पर यवनों के आक्रमण का भय अब हट गया है। अतः वे पुनः काशी की ओर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चल पड़े। रास्ते के उसी वन में होकर गुजरने पर अपने बालक को जीवित देखकर उनके आश्चर्य की सीमा न रही। आपकी पत्नी श्रीमती इल्लमागारू ने उस शिशु को तुरन्त अपनी गोद में ले लिया। इस बालक का नाम बल्लभ रखा गया; जो आगे चलकर महाप्रभु वल्लभाचार्य के नाम से विख्यात हुए। इनका जन्म सं० १५३५ में वैशाख कृष्णा ११ रविवार को हुआ था।

वल्लभ बहुत ही कुशाग्र बुद्धि के बालक थे। विद्या अध्ययन में आपने बड़ी ही योग्यता प्रदर्शित की। कहा जाता है कि १० वर्ष की अल्प आयु में ही आपने समस्त वेद-पुराणों का अध्ययन समाप्त कर लिया था। काशी में होने वाले शास्त्रार्थों में भी आप भाग लेने जाने लगे। इस बीच १५४५ को काशी में ही आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। इसके पश्चात आप अपनी माता के साथ दक्षिण में स्थित विद्यानगर में अपने पूर्वजों के गृह में आ गये। इसके बाद आपने समस्त देश की यात्रायें कीं और निराकार के स्थान पर साकार ब्रह्म की उपासना का व्यापक प्रचार किया। वल्लभाचार्य जी का दार्शनिक मत 'शुद्धाद्वैत' कहलाता है।

एक बार राजा कृष्णदेव राय ने विद्यानगर में एक विशाल सभा का आयोजन किया। जिसमें विभिन्न सम्प्रदायों के विद्वानों ने भाग लिया। उस सभा में एक ओर माधव निम्बार्क, विष्णुस्वामी, रामानुज आदि सम्प्रदायों के विद्वान थे; और दूसरी ओर शंकराचार्य के अनुयायी अद्वैतवादी विद्वान भी थे। दोनों पक्षों के मध्य बहुत बड़ा वाद-विवाद हुआ; जब वैष्णव पक्ष गिरने लगा तो वल्लभाचार्य जी ने उठकर वैष्णव पक्ष को प्रबल कर विजय प्राप्त की। उस समय वैष्णवों की विजय का कारण वल्लभाचार्य बने थे; अतः वैष्णव आचार्यों और राजा कृष्णदेव राय द्वारा उनको काफी सम्मानित किया गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वल्लभाचार्य जी की प्रतिभा से प्रभावित होकर कई सम्प्रदायों के लोगों ने इन्हें अपना आचार्य बनाने का प्रस्ताव रखा। किन्तु वल्लभाचार्य जी ने विष्णु स्वामी सम्प्रदाय वालों का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। सम्प्रदाय का आचार्य घोषित होने पर आपको चूड़ामणि जगद्गुरु महाप्रभु वल्लभाचार्य आदि कई नामों से विभूषित किया गया। राजा कृष्णदेव राय ने आपका 'कनकाभिषेक' किया जिसमें आपको विपुल धनराशि स्वर्ण के रूप में भेट की गयी। किन्तु आपने केवल ७ मुद्रायें ही स्वीकार की तथा शेष सभी को ब्राह्मणों में वितरित कर दिया।

वल्लभाचार्य जी ने अपनी यात्राओं के बीच जिन-जिन स्थानों पर भगवत कथा का पारायण किया है। उन स्थानों पर बैठक की स्थापना की गयी। इन बैठकों में से २२ बैठकें ब्रज में हैं। प्रथम बैठक का निर्माण १५५६ को गोकुल में आचार्य जी के पधारने से उनकी स्मृति में बनवाया गया था।

वल्लभाचार्य जी ने अपने प्रचार के लिये अनेक ग्रन्थों की भी रचना की थी। जिनमें अणु भाष्य सुबोधिनी, पूर्ण मीमाँसा भाष्य, तत्वदीप निबन्ध आदि प्रमुख हैं।

वल्लभाचार्य जी स्वयं उच्चकोटि के साहित्यकार एवं संगीतज्ञ थे। उनकी संस्कृत भाषा में काव्य रचना आज भी सम्प्रदाय में प्रसिद्ध है। ब्रज भाषा साहित्य, संगीत की प्रगति में भी उनका बहुत अधिक योगदान रहा है। वे जीवन भर तक हिन्दी साहित्य एवं संगीत की आराधना करते रहे। स० १५८७ की आषाढ़ शुक्ल ३ को अपरान्ह के समय काशी में हनुमान घाट पर जल समाधि में लीन होकर आपने यह नश्वर संसार को छोड़ दिया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अष्टछाप के संस्थापक गो० विठ्ठलनाथ जी

गो० विठ्ठलनाथ जी का जन्म सं० १५७२ पौष कृष्णा ९ शुक्रवार को काशी के निकट एक ग्राम में हुआ था। ये महाप्रभू वल्लभाचार्य जी के द्वितीय पुत्र तथा गोपीनाथ जी के छोटे भाई थे। गो० विठ्ठलनाथ जी का उपनयन संस्कार लगभग ८ वर्ष की आयु में काशी में ही हुआ था। वहीं उनका विद्या अध्ययन प्रारम्भ हुआ। कहा जाता है कि आपने उस आयु में ही वेद, उपनिषद वेदान्त दर्शन, पुराण आदि ग्रन्थों का आवश्यक ज्ञान एवं अनुशीलन कर लिया था।

आपका प्रथम विवाह आचार्य जी की मृत्यु के उपरान्त सं० १५८९ में हुआ था। उनकी पत्नी का नाम रुक्मिणी था। इनसे आपको ६ पुत्र तथा ४ पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं। सं० १६१६ में इनकी पत्नी का देहान्त हो गया। रानी दुर्गावती के आग्रह पर १६२० में पद्मावती के साथ आपने दूसरा भी विवाह किया। जिससे भी आपको एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। इस प्रकार गो० विठ्ठलनाथ जी के सात पुत्र थे। इसलिये पुष्टि सम्प्रदाय की सात गद्दियाँ प्रचलित हुईं।

अष्टछाप की स्थापना

'अष्टछाप' की स्थापना सं० १६०२ में गो० विठ्ठलनाथ जी ने व्रजभाषा साहित्य संगीत में कीर्तन सेवा के विद्वानों की मंडली का मार्ग दर्शन कराया। जिसमें वल्लभाचार्य जी के समय से ही साहित्य संगीत के उत्थान में सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास एवं कृष्णदास श्रीनाथ जी की कीर्तन सेवा में उपस्थित थे। इसी प्रकार गो० विठ्ठल नाथ जी के भी चार शिष्य हुए, जिनमें गोविन्द स्वामी, छीतस्वामी चतुर्भुजदास और नन्ददास थे। यह भी श्रीनाथ जी की सेवा में नियुक्त थे। इन आठों साहित्य एवं संगीतकारों को मिलाकर एक मंडली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थापित की गयी। यही 'अष्ट सखा' या 'अष्ट छाप' के नाम से विख्यात हुए।

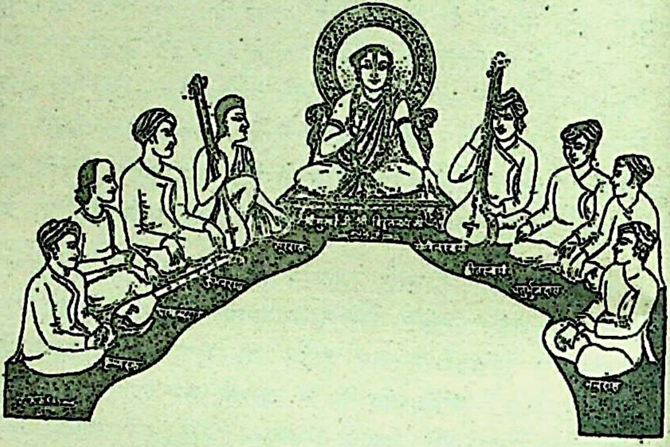

यह ही नहीं श्री वल्लभाचार्य जी एवं गो० विठ्ठलनाथ जी के द्वारा भक्त कवि और गायकों में ६० प्रयोग कलाकारों का प्रमाणित है, साथ आचार्य वंश में भी ५० से अधिक कवियों का उल्लेख है। जिनमें तीनों कलाओं के पोषक और विशेषज्ञ रहे हैं। इस व्रज में आखिरी समय तक आचार्य गो० श्री गोपाल जी महाराज तीनों कलाओं के महान विद्वान हुए हैं। जिनके पास भारत के बड़े-बड़े विद्वानों में से कालदीन विद्यादीन महीनों तक उनकी लीलाभाव देखते और सुनते रहते थे। वैसे सभी आचार्यों में एक से एक विद्वान चले आ रहे हैं। किन्तु उनकी कला केवल सेवा मात्र ही सीमित रही है।

यह व्रज भूमि सदैव से ही साहित्य संगीत का मूलाधार रही है। इन आठों साहित्य सगीतकारों में पूर्व संस्कार होने की विशेषता विद्यमान थी। 'अष्टछाप' के यह आठों महानुभाव श्रीनाथ जी की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेवा में थे। मूल लीला में अर्जुन इन संस्थानों का साहित्य संगीत सेवा को आज 'हवेली संगीत' के नाम से सम्वोधित किया जाता है।

गो० विठ्टलनाथ जी व्रज में रहने के पूर्व रानी दुर्गावती के यहाँ यवनों के आतंग से स्थान पर गये थे। उस मार्ग में राजा रामचन्द्र वाघेला नें इनका वड़ा सत्कार किया। उस समय इस राजा के यहाँ तानसैन दरवारी गायक थे।

मथुरा में रानी दुर्गावती ने गो० विठ्ठलनाथ जी के सात पुत्रों को एक विशाल भवन वनवाया। जो आज सतघड़ा एवं तुलसी चवूतरा नाम से विख्यात है। तव आपके जेष्ठ पुत्र श्री गिरधर जी श्रीनाथ जी के स्वरूप को १६२३ में गोवर्धन से मथुरा लाये, और साथ सूरदास भी थे। जिनसे मिलनें को अकवर और तानसेन की भेंट हुई।

गो० विठ्ठलनाथ जी वहुत ही विद्वान एवं महान पुरुष थे। आपने अनेक शास्त्रों एवं पुराणों का अध्ययन-अनुशीलन किया था। यही नहीं अनेक ग्रन्थों की स्वयं रचना करके अपने पिता के सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला। अधिकाश ग्रंथ तो वल्लभाचार्य जी के ग्रन्थों की ही पूर्ति एवं टीका हैं। इनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं (१) अणुभाष्य का अन्तिम अध्याय, (२) सुवोधिनी की टीका, (३) निम्वन्ध प्रकाश टीका आदि।

गो० विठ्ठलनाथ जी का देहावसान सं० १६४२ में फागुन कृष्ण पक्ष में गिर्राज जी के निकट हुआ था।

श्री कुम्भनदास जी की गायन वार्ता

श्री कुम्भनदास जी का जन्म सं० १५१५ की कार्तिक कृष्ण ११ को गोवर्धन के निकटवर्ती जमुनावती नामक ग्राम में हुआ था। प्रसौली ग्राम के निकट इनकी कुछ पैत्रिक भूमि थी। जिस पर खेती करके यह अपना जीवन निर्वाह करते थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री कुम्भनदास जाति के क्षत्रिय थे। भक्ति के आरम्भिक जीवन में इनके चाचा का इनके ऊपर विशेष प्रभाव पड़ा। वचपन से ही साहित्य संगीत की ओर आपका विशेष लगाय रहा है। अवकाश के समय में भगवान के सामने पद गायन किया करते थे।

सं० १५५० के लगभग महाप्रभु वल्लभाचार्य अपनी प्रथम यात्रा करते हुए गोवर्धन पहुँचे। वहाँ पर बहुत से ब्रजवासी उनके शिष्य हो गये। लेकिन कुम्भनदास जी १५५६ में इनके शिष्य हुए। उस समय वल्लभाचार्य जी ने एक छोटा सा मन्दिर वनवाकर श्रीनाथ जी को पधराया था। कुम्मनदास जी नित्य नये पदों की रचना कर श्रीनाथ जी की सेवा करते थे।

कुम्भनदास जी के सात पुत्र थे। आय का साधन फिर भी वहुत कम था। थोड़ी सी खेती पर ही पूरा परिवार निर्भर था। जीवन भर निर्धन रहने पर भी आपने कभी किसी से याचना नहीं की। एक बार राजा मानसिंह ब्रज में आये थे। जतीपुरा पहुँचकर उन्होंने श्रीनाथ जी के दर्शन किये। राजभोग के समय श्री कुम्भन दास जी वहीं पर पद गायन कर रहे थे। राजा मानसिंह इनका गायन सुनकर वहुत प्रभावित हुए। दूसरे दिन प्रातःकाल ही राजा साहब इनके घर पर मिलने पहुँचे और काफी धन भेट किया। किन्तु कुम्भनदास ने भेट स्वीकार नहीं किया।

एक बार गो० विठ्ठलनाथ जी द्वारकापुरी की यात्रा को जा रहे थे। वे अपने साथ कुम्भनदास जी को भी ले जाना चाहते थे। कुम्भनदास जी उनकी आज्ञा मानकर जाने को तैयार तो हो गये किन्तु उनका मन श्रीनाथ जी की सेवा में ही लगा रहा। पहला मुकाम यात्रा का श्रीनाथ जा के निकट ही पड़ा था। श्रीनाथ जी के विरह में कुम्भनदास जी एक दिन में ही इतने अधर हो गये; कि जावे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

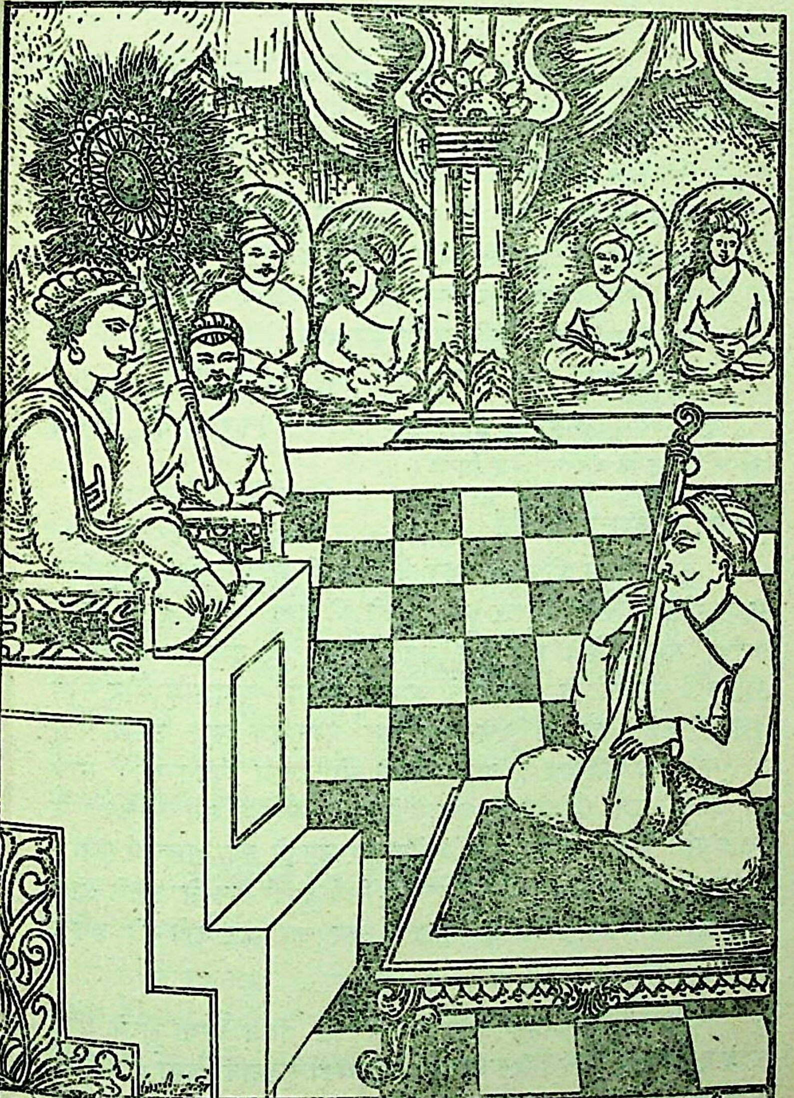

फतेहपुर सीकरी में अकबर के सन्मुख अनिच्छापूर्वक गाते हुए कुम्भनदास जी.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कितने समय का वियोग हो गया हो। उस समय उन्होंने यह पद गाना शुरू कर दिया।

केते दिन हैं जु गये बिन देखें।
तरुन किशोर रसिक नंद नंदन कछुक उठत मुख देखें।
वह शोभा वह कान्ति वदन की कोटिक चन्द्र विशेखें।
वह चितवन वह हास्य मनोहर वह नटवर वपु भेषें।
श्याम सुन्दर संग मिलि खेलन कों आवत जियें अमेखें।
'कुम्भनदास' लाल गिरधर विनु जीवन जन्म अलेखें।

गोस्वामी विठ्ठलनाथ जी ने इनकी दशा देखकर इनको श्रीनाथ जी की सेवा में वापिस भेज दिया।

अकबर बादशाह से भेंट

कुम्भनदास जी सच्चे भक्त और त्यागी महात्मा थे। सांसारिक माया मोह से अलग रहकर श्रीनाथ जी की सेवा करना ही वे अपना कर्तव्य समझते थे। एक बार उनके बनाये हुए एक पद को किसी गायक ने अकबर के दरबार में जाकर सुनाया बादशाह और सभी दरबारी लोग पद की रचना से बहुत प्रभाविय हुए। उनका पता मालुम करके बादशाह ने इनसे मिलने की इच्छा व्यक्त की। साथ ही इनको राज दरबार में बुलाने के लिये सैनिक मय पालकी के इनके पास भेजे। बादशाह के आदेश पर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। किन्तु राज आज्ञा का पालन करने के लिषे दुःखी मन से उनके साथ चल दिये। लेकिन घोड़ा या पालकी पर चढ़ कर नहीं गये बल्कि पैदल ही गये।

गोवर्धन से फतहपुर सीकरी तक की पैदल यात्रा करके आप राज दरबार में पहुँचे। अकबर ने इनका बड़ा सत्कार किया। लेकिन श्रीनाथ जी की सेवा से वंचित रहने के कारण कुम्भनदास को बहुत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दुःख हुआ। जव अकवर वादशाह ने इनसे कोई नया पद सुनाने के लिये आग्रह किया, तो कुम्भनदास जी ने वड़े ही दुखी मन से वादशाह की अप्रसन्नता की चिन्ता किये विना निम्न पद गाया।

भक्तन कों कहा सीकरी सों काम।
आवत जात पन्हैयाँ टूटी विसर गयो हरि नाम।
जाकौ मुख देखें दुख लागै ताकों करन परी परनाम।
'कुम्भनदास' लाल गिरधर विनु यह सव झूंटौ धाम।

यह कहकर कुम्भनदास चुप हो गये। वादशाह ने इनकी व्यथा को समझा और वापिस इनको इनके स्थान पर पहुंचवा दिया।

कुम्भनदास के सात पुत्रों में से एक चतुर्भुजदास भी थे। जो कि स्वयं 'अष्टछाप' के कवियों में से एक थे।

कुम्भनदास ने लगभग ११५ वर्ष की आयु में अपना शरीर त्याग किया था। इनकी मृत्यु सं० १६४० के आसपास ही हुई थी कुम्भनदास जी द्वारा प्रणीत साहित्य विशेष रूप से प्रसिद्धि में नहीं किन्तु उनके स्फुट पद अनेक 'कीर्तन संग्रहों' में यथेष्ट मात्रा में प्राप्त होते हैं। काँकरौली विद्या विभाग के द्वारा उनके लगभग २०० पदों का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

सूरदास की गायन वार्ता

महाकवि सूरदास ने केवल 'अष्टछाप' के कवियों में ही अग्रणीय है वल्कि व्रजभाषा के समस्त कवियों में उनका प्रमुख स्थान है। हिन्दी में कृष्ण काव्य के प्रारम्भ करने का श्रेय वैसे तो मैथिल कवि विद्यापति को है किन्तु उसका पूर्ण विकास सूरदास के काव्य में ही दृष्टिगत होता है। सूरदास के वाद कृष्ण काव्य का इतना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यापक प्रचार हुआ, कि आज तक अनेक श्रेष्ठ कवियों की रचना इसी विषय पर चलती आ रही हैं। इसलिये भारतीय साहित्य में कवि सूरदास के काव्य का महत्वपूर्ण स्थान है।

सूरदास का जन्म सं० १५३५ में वैशाख शुक्ल ५ को दिल्ली के निकटवर्ती सीही ग्राम में हुआ था। कुछ लोग इनका जन्म स्थान आगरा और मथुरा के बीच रूनकता ग्राम भी मानते हैं। इनके पिता का नाम रामदास था। ये जाति के सारस्वत ब्राह्मण थे। सूरदास जन्मांध थे, या वाद में अंधे हो गये थे। इस वारे में लोगों में अभी तक मतभेद हैं। 'भाव प्रकाश' से ज्ञात होता है कि सूरदास बचपन में ही विरक्त होकर घर से निकल आये थे। १८ वर्ष की आयु तक उस ग्राम के वाहर तालाव के निकट एक पीपल के पेड़ के नीचे रहते थे, और लोगों का शगुन वतलाया करते थे। इनकी बतलायी हुई बात सत्य निकलती थी। अतः आसपास के ग्रामों में इनकी काफी प्रसिद्धि हो गयी थी। पूछने वाले जो भेट दे जाते थे उसी से यह अपना गुजारा करते थे।

अचानक रात को प्रभु की ऐसी प्रेरणा हुई, कि 'अरे तू तो भगवान का भजन करने के लिये घर से निकला था, और अब फिर माया में फँस रहा है, यह माया तेरे वैराग्य को जल्दी ही नष्ट कर देगी' यह विचार आते ही सारा सामान वहीं छोड़ कर रात को ही वहाँ से चल दिये और मथुरा आ गये। श्री कृष्ण के जन्म स्थान के कारण वह यहाँ पर रहना चाहते थे किन्तु तीर्थ होने के कारण आने-जाने वाले यात्रियों की भीड़ देख कर वह यहाँ से गऊघाट चले गये और वहीं पर रहने लगे।

सं० १५५० के लगभग जब वल्लभाचार्य जी अपनी तीर्थ यात्रा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करके ब्रज़ में आ रहे थे, तव रास्ते में उनको गऊघाट पर रुकना पड़ा। सूरदास जी ने इनकी प्रसिद्धि के बारे में वहुत कुछ सुन रखा था। अतः सूरदास अपने शिष्यों सहित वल्लभाचार्य जी से मिले और उनके कहने पर सूरदास ने उनको विनय के पद गाकर सुनाये। वल्लभाचार्य जी से सूरदास इतने प्रभावित हुए कि उसी समय उनके शिष्य हो गये। तीन दिन वहीं रुकने के वाद जव वल्लभाचार्य जी गोकुल में आये थे सूरदास भी उनके साथ चले आये।

जव सूरदास जी गोकुल में रहने लगे। प्रतिदिन वल्लभाचार्य जी से भागवत के जिस प्रकरण की व्याख्या को सुनते थे; उसी भाव का पद वना कर गायन किया करते थे। वल्लभाचार्य जी के साथ ही वे गोकुल से गोवर्धन चले आये, और वहीं पर श्रीनाथ जी की सेवा करने लगे। गोवर्धन आ जाने पर उनका स्थायी निवास परासौली वन गया पर वे नित्यप्रति वहाँ से आकर श्रीनाथ जी की सेवा में गायन करते थे। उस समय वे वहाँ के प्रधान कीर्तनकार थे। और उन्होंने एक लाख पदों की रचना प्रभु चरणों में अर्पित करने को की। जो तीन पंक्तियों से स्पष्ट है। इनके वारे में कहा गया है: —

'श्री वल्लभ गुरु तत्व सुनायौ लीला भेद बतायौ।
ता दिन तें हरि लीला गाई एक लक्ष पद वंद।
ताको सार सर सारावलि गावत अति आनंद।'

जिस समय गो० विठ्ठलनाथ जी पुष्ठि सम्प्रदाय के आचार्य हुए। उन्होंने सम्प्रदाय के श्रेष्ठ साहित्यकारों एवं संगीतज्ञों की एक मंडली बनायी जो 'अष्टसखा' अथवा 'अष्टछाप' के नाम से विख्यात हुए। सूरदास का इसमें प्रमुख स्थान था। 'अष्टछाप' की स्थापना १६०२ में हुई थी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूरदास और अकबर की भेंट—

'अष्ट सखान' की वार्ता से ज्ञात होता है कि एक बार तानसेन ने सूरदास का एक पद गाकर सम्राट अकबर को सुनाया था। गायन सुनकर अकबर ने सूरदास से मिलने की अभिलाषा प्रकट की। सूरदास से अकबर और तानसेन की भेंट सं० १६२३ में हुई; उस समय सूरदास ने निम्न पद गाकर उपदेशात्मक भाव का प्रदर्शन किया था। यह पद 'सूर पच्चीसी' के नाम से प्रसिद्ध है—

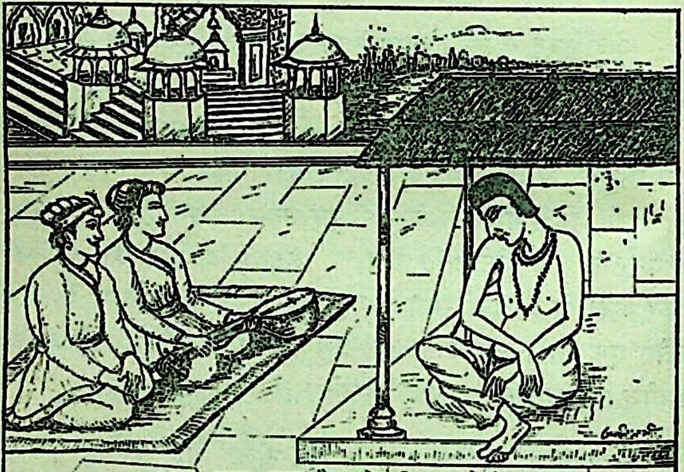

१६२३ मे सम्राट अकबर और तानसेन की सूरदास से भेंट।

पद—'मन रे तू कर माधों सैं प्रीत।
काम, क्रोध, मद, लोभ, माया छाँड़ सकल विपरीत।'
(पूरा पद सूर पच्चासी में देखिये)

इस पद के द्वारा सूरदास ने सभी भावों का वर्णन गायन द्वारा प्रस्तुत किया था। किन्तु फिर भी अकबर ने अपने यश वर्णन का भाव उनसे सुनाने को कहा। इस पर सूरदास ने निम्न पद गाकर सुनाया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पद—नाहिन रह्यौ रे मन ठौर।
नंद नंदन अछुत कैसें, आनिये उर और।
चलत चितवत. दिवस जागत समन सोवत राति।
हृदयते वह श्याम मूरति छिन न इत उत जाति।
श्याम गात सरोज आनन ललित अति मृदु हास।
'सूर' ऐसे रूप कारन मरत लोचन प्यास।

इस पद के द्वारा सूरदास ने अकबर को यह बतलाया था कि इस हृदय में भगवान कृष्ण के अलावा और किसी व्यक्ति के लिये कोई स्थान नहीं है। अकबर सूरदास की बात सुनकर आश्चर्य चकित रह गया। पद की अन्तिम पंक्ति के बारे में अकबर ने फिर प्रश्न किया (सूरदास जी आपके नेत्र तो हैं ही नहीं फिर इनके प्यासे रहने का अभिप्राय क्या है ? लेकिन सूरदास ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। अकबर ने फिर अपनी माया का प्रभाव डालना चाहा और अपने अमूल्य जवाहारात देने के भाव प्रगट करने लगा। किन्तु सूरदास ने इसका उत्तर देते हुए निम्न पद गाया—

पद—मेरे जिय ऐसी आय बनी।
छांड गुपाल और जो बरनौं तो लाजै जननी।
कहा लों करूं काँच को संग्रह छोड़ अमोल मणी।
'सूरदास' प्रभु गोवर्धन धर वे हैं त्रिभुवन धनी।

सूरदास का स्थायी निवास गोवर्धन के निकट परासौली ग्राम था। वे प्रतिदिन वहाँ से पैदल आकर श्रीनाथ जी में कीर्तन सेवा करते थे। उनका रचना काल १६४० तक कहा जा सकता है। सूरदास के पदों का एक बड़ा संग्रह 'सूरसागर' के नाम से प्रख्यात है। इसके अलावा सूर सारावली, साहित्य लहरी आदि कई संग्रह भी उपलब्ध हैं।

सूरदास का देहावसान परासौली में लगभग १६४० में हुआ था। वहाँ पर अभी तक उनकी कुटी बनी है। अपना अन्तकाल निकट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जानकर वे एक दिन श्रीनाथ जी की आरती करके परासौली में जा कर चबूतरे पर अचेत लेट गये। श्रीनाथ जी के मन्दिर में जब कीर्तन के समय इनको नहीं पाया गया तो गो० विठ्ठलनाथ जी ने अपने शिष्य भेज कर इनका पता लगाया और अन्तिम समय जानकर स्वयं भी इनसे मिलने आये। उनको आते ही सूरदास ने निम्न पद गुनगुनाते हुए यह नश्वर शरीर त्याग दिया।

पद—खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते।
चलि-चलि जात निकट श्रवनन के उलटि पलटि ताटकं फंदाते।
'सूरदास' अंजन गुन अटके नतरु अबहिं उड़ि जाते।

परमानंददास की गायन वार्ता

परमानंददास का जन्म सं० १५५० में मार्गशीर्ष शु० ७ सोमवार को हुआ था। वे कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। उनके पिता अत्यन्त साधारण स्थिति के व्यक्ति थे। दान आदि लेकर अपने परिवार का पोषण करते थे।

एक वार कन्नौज में वड़ा भारी दुष्काल पड़ा था। वहाँ के हाकिम ने दंड स्वरूप परमानंददास के पिता का सारा द्रव्य ले लिया। इससे इनके पिता बड़े दुखी होकर बोले कि अभी मैं तेरा विवाह भी नहीं कर पाया हूँ और सारा धन नष्ट हो गया। अब हमें फिर से धन संग्रह करना चाहिए। इस पर परमानन्ददास ने कहा कि आप मेरे विवाह की चिन्ता न करें। मुझे विवाह करना ही नहीं है इसलिये धन कमाने की वात भी बेकार है। हमें भगवान का भजन करना चाहिए और उनके सहारे पर ही रहना चाहिए। लेकिन इनके पिता को यह वात अच्छी नहीं लगी और वे धनोपार्जन के लिये देशाटन को निकल पड़े। लेकिन परमानन्ददास वहीं साधु मंडली में कीर्तन करके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपने समय का सदउपयोग करने लगे। इस विरक्त भावना के कारण आपने विवाह नहीं किया। वे लगभग २६ वर्ष की आयु तक कन्नौज में रहे।

सं० १५५६ के लगभग वे मकर संक्रान्ति के पर्व पर कन्नौज को छोड़कर प्रयाग चले आये। प्रयाग में इनका मन लगा कि वहीं पर वस गये। भजन-कीर्तन का तो नियम वन गया था। अनेक भक्त साधू-संत इनके पास आने जाने लगे। धीरे-धीरे इनकी प्रसिद्धि दूर तक फैल गयी। उस समय वल्भाचार्य जी की यात्रा का मुकाम अड़ैल में पड़ा था। उनके जल घरिया कपूर ने परमानन्द स्वामी का नाम सुना और उनके कीर्तन को सुनने के लिये ११ की रात को वहाँ पहुँचा। कीर्तन सुन कर जव वह जल घरिया लौटकर वापिस चला आया किन्तु उसी रात स्वप्न में परमानन्द स्वामी को वल्लभाचार्य जी से मिलने की प्रेरणा हुई। इस कारण वे प्रातःकाल होते ही वल्लभाचार्य जी के दर्शनार्थं वहाँ पहुँच करके इन्होंने निम्न विरह का पद गाकर उनको सुनाया।

पद—जिय की साध जिय में रही री।
बहुरि गुपाल देखन नहिं पाये विलपत कुंज अहीरी।
इन दिन सो सखी इहिं मारग बेचन जात दहीरी।
प्रीति के लिये दान मिस मोहन मेरी वाँह गहीरी।
बिन देखें छिन जात कलप सम विरहा अनल दही रो।
'परमानंद' स्वामी विन दर्शन नैनन नीर वही री।

परमानन्द स्वामी पर वल्लभाचार्य जी का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे वहीं पर उनके शिष्य हो गये। वल्लभाचार्य जी के सत्संग में आकर एवं उनके उपदेश पर इन्होंने श्री कृष्ण की बाल-लीला के अनेक पद बनाये। सं० १५८१ में जब वल्लभाचार्य जी ब्रज में आये तो परमानन्ददास भी उनके साथ चले आये। कुछ समय तक गाकुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

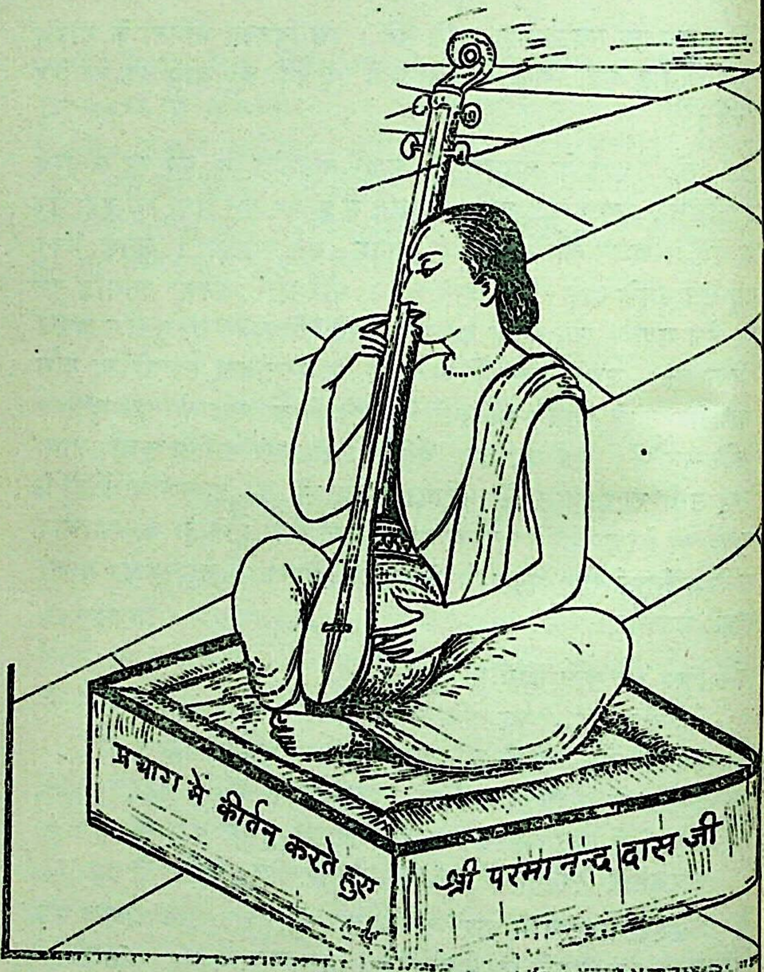

में रहने के बाद आप गोवर्धन चले आये और श्री नाथ जी में कीर्तन सेवा करने लगे। ब्रज में आने पर अपना शेष जीवन उन्होंने भगवत लीला गुणानवाद में व्यतीत किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

सं० १६०२ में जब गो० विठ्ठलनाथ जी ने "अष्टछाप" की स्थापना की तो उसमें परमानन्ददास को भी शामिल किया गया। क्योंकि यह साहित्य और संगीत के ज्ञाता होने के कारण साथ ही साथ सुकवि और गायक भी थे। अनेक सुन्दर पदों में उन्होंने श्री नाथ जी के सन्मुख कीर्तन द्वारा श्रीकृष्ण की वाल-लीलाओं का वर्णन किया है। ब्रजभाषा काव्य में सूरदास और परमानन्ददास दो ही वात्सल्य रस के श्रेष्ठ कवि और गायक हुये। उनके प्रमुख ग्रन्थ "परमानन्द सागर" के विषय में साहित्यकारों को अभी तक कोई जानकारी नहीं है।

सं० १६४१ में भाद्रपद कृष्णा ९ अर्थात् जन्माष्टमी के दूसरे दिन अपने निवास स्थान सुरभी कुण्ड पर आपने लगभग ९२ वर्ष की आयु में यह संसार छोड़ दिया।

कृष्णदास की गायन वार्ता

कृष्णदास का जन्म सं० १५५३ में गुजरात के चिलोतरा नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता गाँव के मुखिया थे। वचपन से ही कृष्णदास की रुचि कथा-वार्ता व सत्संग में रहती थी। किन्तु इनके माता-पिता इस कार्य में वाधा डालते थे, इसलिये यह उदास होकर खाना-पीना भी छोड़ देते थे। इनके इस आचरण से घर वालों की यह धारणा हो गयी थी कि यह बड़े होकर विरक्त जीवन व्यतीत करेगा।

जब कृष्णदास १२ वर्ष के थे, उनके ग्राम में एक बंजारा आया। उसने अपना सारा माल गाँव वालों को बेच दिया। रात को वह उसी गाँव में ठहरा हुआ था। कृष्णदास के पिता ने अपने कुछ आदमी भेज कर उसका सारा द्रव्य लुटवा दिया। कुछ धन उन लोगों में बाँट कर शेष सभी अपने घर में छुपाकर रख दिया। सुवह होते ही वह बंजारा गाँव के मुखिया के पास जाकर रोया कि मेरा सारा धन चुरा लिया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गया है। किन्तु कृष्णदास के पिता ने उसकी एक भी बात नहीं सुनी और उसे गाँव से बाहर निकलवा दिया। कृष्णदास को अपने पिता के इस व्यवहार से बड़ी घृणा व दुःख हुआ। कृष्णदास ने जाकर उस बंजारे से कहा कि तेरा धन इस गाँव के मुखिया अर्थात् मेरे पिता ने ही चुराया है। तू बादशाह से जाकर के फरियाद कर में तेरे समर्थन में गवाही दूँगा, और इस तरह कृष्णदास अपने पिता के विरुद्ध गवाही देने के कारण इनके पिता को बंजारे का सारा धन देना पड़ा।

इस घटना के फलस्वरूप कृष्णदास विरक्त होकर अपने घर से निकल पड़े। अनेक तीर्थों की यात्रा करते हुए ब्रज में आये। उन दिनों वल्लभाचार्य जी ब्रज में ही थे। कृष्णदास जी जाकर इनके शिष्य हो गये। कृष्णदास ने गुजराती भाषा की प्रारम्भिक शिक्षा तो अपने गाँव में ही पूरी कर ली थी; किन्तु ब्रज भाषा काव्य और संगीत का ज्ञान इनको गोवर्धन में पुष्टि सम्प्रदाय के विद्वानों के सत्संग से हुआ। पुष्टि सम्प्रदाय में सम्मिलित होने पर इनको श्रीनाथ जी की भेंट एकत्र करने का कार्य सौंपा गया बाद में इनको मन्दिर का अधिकारी बना दिया गया।

कृष्णदास काव्य एवं संगीत शास्त्र के ज्ञाता होने के साथ ही साथ सुकवि और गायक भी थे। उन्होंने अनेक सुन्दर पदों की रचना की है। जब विठ्ठलनाथ जी ने "अष्टछाप" की स्थापना की तो कृष्णदास को भी सम्मिलित किया।

कृष्णदास कला पारखी और रसिक व्यक्ति थे। एक बार वे मन्दिर के काम से आगरा गये। वहाँ पर उन्होंने एक वेश्या का गायन सुना। उसकी कला पर यह बहुत आकर्षित हुए और उसे अपने साथ ले आये। वह वेश्या केवल ख्याल ही गाती थी। कृष्णदास ने उसे अपने ही कुछ पद याद कराकर श्रीनाथजी के सन्मुख गायन करने को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा। इस प्रकार उस वेश्या को श्रीनाथ जी के चरणों में पहुँचा कर

कृष्णदास अपने अधूरे कूए का निरीक्षण करते हुए:

कृष्णदास ने उसका जीवन सार्थक करा दिया, एक दिन श्रीनाथजी की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्थापन झांकी के अवसर पर वह वेश्या कृष्णदास द्वारा रचित निम्न पद का गायन कर रही थी—

"मो मन गिरधर छवि पर अटक्यौ ।
ललित त्रिभंगी अंगन पर चलि गयौ तहाँ ही ठटक्यौ ।
सजल श्याम घन चरण नील है, फिर चित अनत न भटक्यौ ।
"कृष्णदास" कियौ प्रान नौछावर, ये तन, जग, सिर पटक्यौ ।"

कहते हैं कि इस पद का गायन होते ही उस वेश्या ने अपने प्राणों को न्योंछावर कर वहीं अपनी सेवा को समाप्त कर दिया।

कृष्णदास ने वर्षों तक मन्दिर के अधिकारी पद पर रह कर श्रीनाथ जी की सेवा की थी। उनके देहावसान से पूर्व एक व्यक्ति ने इनको तीन सौ रुपया देकर कुआ बनवाने की प्रार्थना की थी। कृष्ण दास ने कुआ वनवाने का कार्य आरम्भ कर दिया। उन्होंने दो सौ रुपया आरम्भिक व्यय के लिये अपने पास रख लिया; और शेष १००) रुपये एक वृक्ष के नीचे इस अभिप्राय से गाढ़ दिये कि बाद में जरूरत पड़ने पर इनका उपयोग किया जायेगा। कुए का निम्न भाग वनकर तैयार हो गया था और ऊपरी भाग वनना शेष था तभी दो सौ रुपये समाप्त हो गये। एक दिन कृष्णदास उस अधूरे कुए का निरीक्षण करने गये थे और कुए के किनारे जाकर अपने हाथ की छड़ी के सहारे खड़े थे; कि अचानक छड़ी फिसल जाने से वे कुए में गिर गये और उनकी मृत्यु हो गयी।

इस दुर्घटना के कारण वह कुआ भी अधूरा पड़ा रहा। कुछ समय पश्चात गो० विठ्ठलनाथ जी को कृष्णदास के इस अचानक निधन के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। उन्होंने वह गाढ़ा हुआ रुपया निकाल कर कुआ पूर्ण करवाया। यह आज भी 'कृष्णदास का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुआ' नाम से गोवर्धन में प्रसिद्ध है। कृष्णदास का देहावसान सं. १६३६ के लगभग हुआ था।

कृष्णदास ने शृंगार और भक्ति में अनेक पदां की रचना की है। वार्ता से ज्ञात होता है कि कृष्णदास प्राय: सूरदास की प्रतियोगिता में पदों की रचना करते थे। यही कारण है कि उनकी रचना में कहीं कहीं सूरदास के भावों को छाया भी दृष्टिगत हो जाती है।

गोविन्द स्वामी की गायन वार्ता

गोविन्द स्वामी "अष्टछाप" में साहित्य संगीत के अद्वितीय विद्वान हुए हैं। जिनसे कि संगीत सम्राट तानसैन तक ने संगीत सम्बन्धी शिक्षा प्राप्त की थी। इनका जन्म सं० १५९२ के लगभग भरतपुर राज्य के आंतरी नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता तथा परिवार के विषय में विशेष जानकारी नहीं मिलती। वे साधारण सनाढ्य ब्राह्मण थे। बाल्यावस्था में ही इनका विवाह हो गया था। इनके एक कन्या का भी जन्म हुआ था। कुछ समय तक ग्रहस्थाश्रम में रहने के बाद सांसारिक माया मोह त्याग आपने सन्यास ले लिया।

ग्रहस्थ छोड़कर ईश्वर प्राप्ति के लिए आप ब्रज में चले आये और महावन में ऊँचे टीलों पर रहने लगे। वहीं पर भगवान की भक्ति में ध्यान मग्न होकर अपनी संगीत साधना करने लगे। आसपास के लोग इनके पास आकर कीर्तन में भाग लेते थे। धीरे-धीरे उनमें भी संगीत के संस्कार उत्पन्न होने लगे और वह संगीत प्रेमी गोकुल में जाकर गो० विठ्ठलनाथ जी की सेवा पद्धति में अपना गायन करने लगे। गो० विठ्ठलनाथ जी उन संगीत प्रेमियों से प्रसन्न होकर प्रभु भक्ति के साथ-साथ भगवत प्रसाद देकर के भी उत्साहित किया करते थे। अपने सत्संगियों द्वारा यह समाचार गोविन्द स्वामी ने सुना तो उन्होंने भी विठ्ठलनाथ जी से मिलने की इच्छा प्रगट की।

इसलिये एक दिन गोविन्द स्वामी अपने प्रेमियों के साथ गोकुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहुँचे। वहाँ पर पहुँच कर गो० विठ्ठलनाथ जी को देखकर बड़े प्रभावित हुए और अपना संकीर्तन भाव उनकी सेवा में अर्पित किया। अन्य वैष्णवों का परामर्श मानकर गोविन्द स्वामी वहीं पर गो० विठ्ठलनाथ जी के शिष्य बन गये। इसके बाद गोविन्द स्वामी ने अनेक वैष्णव भक्तों से पूर्व भगवत सेवा के साथ; साहित्य एवं संगीत में अपूर्व सफलता प्राप्त की।

उस समय गोविन्द स्वामी की प्रशंसा जव सम्राट अकबर के दरबार तक पहुँची तो उन्होंने गोविन्द स्वामी से मिलने की इच्छा व्यक्त की। किन्तु उनको जव यह बात ज्ञात हुई कि गोविन्द स्वामी तो बड़े निर्लेप भगवान के भक्त हैं; और सांसारिक मोह माया को परित्याग कर केवल भगवान के भजन में लीन रहते हैं। अतः बादशाह ने उनसे अपना मिलन असम्भव समझा किन्तु फिर भी प्रयत्न जारी रखा।

एक दिन गोविन्द स्वामी अपनी भगवत सेवा के लिये गोकुल में जशोदा घाट पर भैरवी राग की प्रस्तावना करके अपना गायनाभ्यास कर रहे थे; कि सम्राट अकवर वेष वदल कर वहाँ आ गये और राहगीरों में मिल कर उनका गायन सुनने लगे। उस आकर्षक गायन को सुनकर अकबर बादशाह वाहवाह किये बिना नहीं रह सका। तुरन्त ही गोविन्द स्वामी ने अपना गायन बन्द कर दिया। यह देख कर अकवर उनके सामने जाकर खड़ा हो गया; और अपना परिचय देकर उनकी प्रशंसा करने लगा। तब गोविन्द स्वामी ने सम्राट अकबर से कहा कि यह साहित्य संगीत भगवत सेवा करने का माध्यम है। जिसे में अपने प्रभु के दरबार में पेश करने के लिये अपनी साधना कर रहा था; जिसे तुमने आकर अपनी सेवा से वंचित करा दिया। अब मेरा प्रयोग असफल हुआ। यह सुनकर सम्राट अकवर आश्चर्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में रह गया। यहाँ पर एक शंका उत्पन्न होती है कि गोविन्द स्वामी की सेवा निष्फल क्यों और कैसे हो गयी ?

इस प्रकार का पुष्टि सम्प्रदाय के सेवा मार्ग में बहुत बड़ा विधान है। भक्त जब प्रभु के लिये भोजन सामिग्री बनाता है और भगवान के सामने आने से पहले ही उस पर किसी की दृष्टि पड़ जाती तो वह सामिग्री प्रभु के योग्य नहीं रहती। यह पुष्टि सेवा मार्ग का सर्वमान्य नियम है। इसी कारण जब गोविन्द स्वामी के गायन को भगवत सेवा से पूर्व ही सम्राट अकबर ने छुपकर सुनने की कोशिश की इसलिये यह गायन सेवा प्रभु के सामने प्रयोग करने के योग्य नहीं रही।

इस प्रकार की भावनाओं से प्रेरित होकर सम्राट अकबर आश्चर्य चकित होकर वहाँ से लौट आया। किन्तु जब सम्राट अकबर ने अपने दरबार में तानसैन को संगीत सम्राट की उपाधि प्रदान करनी चाही। उस समय के गायकों में तीन प्रकार की विशेषतायें विद्यमान थीं। प्रथम तो भगवान के भक्त तथा द्वितीय साहित्य रचना में कवियों की श्रेणी में एवं तृतीय संगीत शास्त्र में अद्वितीयता इस प्रकार की विशेषता 'अष्टछाप' के महापुरुषों में थीं। किन्तु उस समय तक तानसैन न तो भक्त थे; और न साहित्यिक कवियों की श्रेणी में आते थे। अकबर का सूरदास जैसे भक्त और कवियों से सम्पर्क हो चुका था। इसलिये दरबारी आश्रय में ख्याल गायन को महत्व देकर उस समय के गायकों में अपनी विजय का आधिपत्य जमा रहे थे। उसी बीच में गो॰ विठ्ठलनाथ जी अपनी भ्रमण यात्रा करते हुए ब्रज में आ रहे थे। यह समाचार तानसैन को विदित हुआ। उस समय उनसे मिलकर तानसैन यह प्रगट करना चाहते थे कि मैं दरबारी गायक हो गया हूँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसलिये जिस समय तानसैन गो० विठ्ठलनाथ जी से मिलने आये उन्होंने अकब्र दरबार के गायन का महत्व दिखाते हुए अपनी कला का प्रदर्शन किया; गो० विठ्ठलनाथ जी ने तानसैन की प्रशंसा करते हुए सहस्र मुद्राओं के पुरष्कार पर दो कौड़ी रख कर विदाई दी। यह देखकर तानसैन बड़े आश्चर्य में पड़ गये और उनसे कौड़ी का कारण पूछने लगे। इस पर गो० विठ्ठलनाथ जी ने तानसैन को बतलाया कि तुम सम्राट अकबर के दरबारी गायक हो; इसलिये स्वर्ण मुद्राओं द्वारा अभिनन्द किया गया है। यदि तुम अपने गायन के बारे में जानना चाहते हो तो कीर्तन गायन के समक्ष तुम्हारा गायन दो कौड़ी के बराबर नहीं है। स्वर्ण मुद्राओं के ऊपर कौढ़ी रखना इसी बात का संकेत है। इस प्रकार गो० विठ्ठलनाथ जी का उत्तर सुनकर तानसैन आश्चर्य चकित होकर कहने लगा; कि मैं इस बात को किस प्रकार स्वीकार करूँ। उनका समाधान करते हुए गो० विठ्ठलनाथ जी ने बताया कि गायन में जब तक भाव का स्पष्टीकरण नहीं हो तब तक गायन कैसा। इतने पर भी तानसैन की जिज्ञासा शान्त न हुई; तो उन्होंने गोविन्द स्वामी को बुलवाकर गायन सुनाने की आज्ञा दी। उस समय गोविन्द स्वामी ने निम्न पद गाकर तानसैन को स्पष्ट कराया।

श्रीवल्लभ नन्दन, रूप, अनूप, स्वरूप कहौ नहीं जाई।
प्रगट परमानन्द गौकुल बसत हैं, सब जग के सुखदाई।
भक्ति-मुक्ति देत संतन कों, निज जन पर कृपा प्रेम बरखत अधिकाई।
सुख में सुख रूप, सुखद ग्रह, रचना, कहाँ लों बरनों गोविन्द बल जाई।

× × ×

गोविन्द स्वामी से इस प्रकार का गायन सुनकर तानसैन चकित रह गये। गोविन्द स्वामी ने उनको बतलाया कि यह साहित्य-संगीत भगवत सेवा में गुणानवाद करने का मार्ग है, और यह सेवा भी बिना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुरु कृपा के असम्भव है। इस प्रकार गोविन्द स्वामी का आदेश मान कर तथा उनके उपदेश का पालन करते हुए; तानसैन ने गो० विठ्ठलनाथ जी के समक्ष जाकर भगवत नाम की दीक्षा ली। वैष्णव धर्म का आचरण करते हुए वहीं रहें। इसके बाद सम्राट तानसैन गोविन्द स्वामी के कीर्तन समाज में भाग लेने लगे।

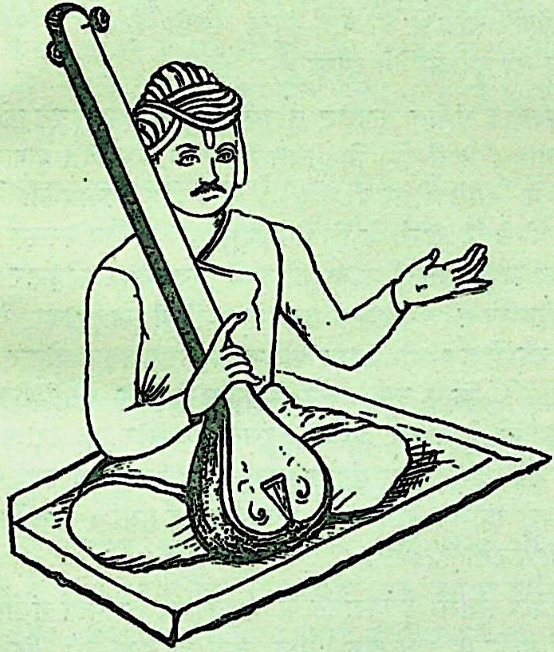

गोविन्द स्वामी ने तानसैन को गाकर सुनाया

भक्ति मार्ग में आने के बाद संगीत सम्राट तानसैन के मन में इस साहित्य संगीत सेवा के महत्व की जानने की कामना हुई; इसके लिये वे नरवर गढ़ के राजा आसकरन के दरबार में पहुँचे और एक विष्णु पद गाकर सुनाया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"कुँवर बैठे प्यारी के संग, अंग-अंग भरें रंग ।
बल-बल-बल त्रिभंगी, युवतिन सुखदाई ।"

राजा इस पद को सुनकर वहुत प्रसन्न हुए; और कहने लगे कि यह पद तुमने कहाँ से सीखा है, कृपया मुझे भी अवगत कराइये। तानसैन ने कहा कि यह पद गोविन्द स्वामी द्वारा रचित सहस्रों पदों में से मैंने काफी साधना के बाद प्राप्त किया है और आपके समक्ष अपने गायन की परीक्षा देने आया हूँ।

तत्पश्चात संगीत सम्राट तानसैन राजा आसकरन को लेकर गोकुल में आये। वहाँ गो० विठ्ठलनाथ जी से प्रभावित होकर राजा आसकरन ने उनसे दीक्षा ग्रहण की। गो० विठ्ठलनाथ जी ने राजा आसकरन को सेवा करने के लिये मदनमोहन जी का स्वरूप दिया। राजा साहव अपना सारा राजपाठ अपने दीवान पर छोड़कर भगवत सेवा में लीन हो गये। लेकिन एकवार दक्षिण के राजा ने उनके राज्य पर चढ़ाई कर दी राजा आसकरन को मजबूर होकर रणक्षेत्र में जाना पड़ा। किन्तु उस समय भगवत कृपा से ऐसी भीषण वर्षा हुई कि शत्रु की सेना पर पत्थर वरसने लगे और वह परास्त होकर भाग खड़ी हुई। इस प्रकार संगीत सम्राट तानसैन की प्रेरणा से राजा आसकरन को भगवत सेवा का अवसर प्राप्त हुआ। उन्होंने अनेकों पदों की भी रचना की थी।

गोविन्द स्वामी उच्चकोटि के भक्त एवं साहित्य संगीतज्ञ थे। उनका पूर्ण साहित्य अभी तक प्राप्त नहीं हो सका है। किन्तु खोज करने पर २५२ पदों का संग्रह पुष्टिसम्प्रदाय में प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त "अष्टछाप कीर्तन संग्रह" में ६०० के लगभग पद बताये जाते हैं।

गोविन्द स्वामी गुरु भक्ति का अलौकिक जीवन वृतान्त आज भी संसार में अटल है। उन्होंने पूज्य गुरु गो० विठ्ठलनाथ जी की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लीला समापन का समाचार सुनते ही गोवर्धन की एक कंदरा में अपना शरीर त्याग दिया। उनका निधन काल सं० १६५२ माना जाता है।

छीतस्वामी की गायन वार्ता

छीतस्वामी का संक्षिप्त परिचय 'दो सौ वावन' वैष्णवों की वार्ता तथा 'अष्ट सखान' की वार्ता से प्राप्त होता है। इनका जन्म मथुरा में सं० १५७२ के लगभग हुआ था। जाति के चतुर्वेदी (चौबे) थे। उनके घर में यजमानी का कार्य होता था। वे अकबर बादशाह के दीबान वीरबल के पुरोहित थे।

छीतस्वामी अपने प्रारम्भिक जीवन में बड़ी क्षुद्र प्रकृति के व्यक्ति थे। इनकी गणना मथुरा के प्रसिद्धों में की जाती थी। आप छीतू चौबे के नाम से जाने जाते थे। राह चलते आदमी से छेड़छाड़ करना उनका स्वाभाविक स्वरूप था। उस समय उनकी आयु २० वर्ष के लगभग थी; जिस समय गो० विठ्ठलनाथ जी के अलौकिक व्यक्तित्व की चर्चा सर्वत्र फैली हुई थी। छीतू चौबे तथा उनके साथियों ने यह विचार किया कि यह गुसाईं सब पर जादू-टौना करके अपने वश में कर लेता है। इसे चलकर देखना चाहिए।

यह विचार आते ही एक दिन छीतू चौबे जी अपने चार साथियों के साथ एक खोटा रुपया और एक थोथा नारियल लेकर गोकुल पहुँचें। वहाँ पर गो० विठ्ठलनाथ जी के सामने वह खोटा रुपया और थोथा नारियल भेट करके बैठ गये। लेकिन उसी समय गो० विठ्ठलनाथ जी द्वारा उस नारियल के टुकड़े कराये गये तो उसमें से सफेद और ताजा गिरी निकली; इसी तरह खोटे रुपये की कीमत भी परिवर्तित हो गयी। छीतू चौबे उनका यह चमत्कार देखकर ठगे से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रह गये; और अपने साथियों से कहने लगे कि भाई मुझ पर तो इनका जादू असर कर गया है अब तुम सब लोग यहाँ से चले जाओ। यह सुनकर उनके सभी साथी तो भाग गये, किन्तु छीतस्वामी ने वहीं अपने मिलन के भाव में निम्न पद गाकर सुनाया।

पद—भई आज गिरधर सों पहचान।
कपट रूप धरि छलिवे आयौ पुरुषोत्तम नहिं जान।
छोटो-वड़ौ कछू नहिं समझौ छाय रहौ अज्ञान।
छीतस्वामी देखत अपनायौ श्री विठ्ठल कृपानिधान।

उस समय छीतस्वामी की मन स्थिति एकदम बदल गयी। उन्होंने प्रेम सहित गोस्वामीजी को नमन किया। गो० विठ्ठलनाथजी ने उनको भगवत नाम की दीक्षा दी और धर्म का आचरण सिखाया। इससे यह वैष्णव भक्तों की मंडली में बैठने लगे। यह घटना सं० १५९२ की है।

छीतस्वामी पुष्टि सम्प्रदाय में सम्मिलित होने के बाद स्थायी रूप से गोवर्धन वास करने लगे। ◌ीर्तन एवं भक्तों की संगति में प्रविष्ट होने के फलस्वरूप उनमें संगीत एवं काव्य प्रतिभा का विकास हुआ। जिस समय गो० विठ्लनाथ जी ने 'अष्ठछाप' की स्थापना की उस समय छीतस्वामी को भी उसमें उचित स्थान दिया।

छीतस्वामी ने भक्ति भाव के लीला विषय में महत्वपूर्ण जिनमें से कीर्तन संग्रह में २०० पद प्रकाशित हो चुके हैं।

अकबर के दरबारी कवि बीरबल के पुरोहित होने के कारण उनको वार्षिक वृति मिलती थी। जिससे वह अपने परिवार का पोषण किया करते थे। एकबार जब छीतसवमी बीरबल के पास अपनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वार्षिक वृति लेने पहुँचे तो वीरवल ने उनसे गायन करने की अभिलाषा व्यक्त की। उस समय उन्होंने निम्न पद सुनाया।

पद—जे वसुदेव किये पूरण तप को फल फलति श्री वल्लभ देह।
जे गोपाल हुते गोकुल में तेई अब आन बसे निज गेह।
जे वे गोप वधू ही वृज में सोई अव वेद ऋचा भईं तेह।
'छीतस्वामी' गिरधरन श्रीविठ्ठल वेई तेईतेई वेई कछु न संदेह।

इस प्रकार छीतस्वामी ने गो० विठ्ठलनाथ जी को साक्षात ईश्वर के स्वरूप में प्रगट किया। किन्तु वीरवल को उनके देवत्व पर सन्देह हुआ। इस सन्देह के प्रसंग पर छीतस्वामी वीरबल से रुष्ट होकर अपने स्थान को वापिस चले गये।

जव गो० विठ्ठलनाथ जी को यह बात ज्ञात हुई; तो उन्होंने छीतस्वामी को आर्थिक सहायता के लिये लाहौर भेजना चाहा। किन्तु उन्होंने जाना स्वीकार नहीं किया। तव उन्होंने पत्र भेजकर उनके परिवार के पोषण का प्रवन्ध करा दिया। छीतस्वामी का देहान्त सं० १६४२ के लगभग गो० विठ्ठलनाथ जी के वाद ही हुआ था।

चतुर्भुजदास की गायन वार्ता

चतुर्भुजदास का जन्म सं० १५८७ के लगभग गोवर्धन के निकट जमुनावती नामक गाँव में हुआ था। 'अष्टछाप' के वयोवृद्ध कवि श्री कुम्भनदास जी के पुत्र थे। वे सात भाई थे। इनका एक भाई कृष्णदास श्रीनाथ जी की गायों की रखवाली करता था। चतुर्भुज वचपन से ही अपने पिता के अनुयायी रहे। सं० १५६७ में उन्होंने गो० विट्ठलनाथ जी से दीक्षा ली थी। चतुर्भुजदास अपने पिता के बड़े ही आज्ञाकारी पुत्र थे। वचपन से ही उनमें साहित्य-संगीत के प्रति अभिरुचि थी। अपने पिता के संरक्षण में उत्तम भावों की रचना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का सुअवसर प्राप्त करने के वाद उनको भगवत सेवा करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।

सं० १६०२ में जब 'अष्टछाप' की स्थापना की गयी तो उसमें चतुर्भुजदास को भी सम्मिलित किया गया। चतुर्भुजदास ने अनासक्त गृहस्थ जीवन व्यतीत किया था। उनका समस्त जीवन श्रीनाथ जी की सेवा में रहकर कीर्तन द्वारा सदुपयोग करने में व्यतीत हुआ।

चतुर्भुजदास अपने समय के भक्त एवं साहित्य-संगीतज्ञों में प्रमुख स्थान रखते थे। उनके स्फुट पदों का संग्रह तीन भागों में उपलब्ध है। १. कीर्तनावली, २. दानलीला, ३ पद संग्रह। ये सभी कांकरौली के विद्या विभाग में प्राप्त हैं। उन्होंने अपने पदों में भगवान श्री कृष्ण के जन्म से लेकर गोपी विरह तक की लीला का पदों में वर्णन किया है।

सं० १६४२ में ही गो० विठ्ठलनाथ की मृत्यु का हृदय विदारक समाचार सुनकर इन्होंने भी अपना शरीर त्याग दिया।

नन्ददास की गायन वार्ता

'अष्टछाप' के कवियों में 'सूरदास' और 'परमानन्ददास' के वाद नन्ददास ही श्रेष्ठ कवियों में से थे। 'व्रज भाषा काव्य' में उनका महत्वपूर्ण स्थान है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नंददास का जन्म सं० १५६० के लगभग सूकर क्षेत्र सोरों के पास रायपुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम जीवाराम था। ये गो० तुलसीदास जी के चचेरे भाई थे। तुलसीदास आयु में नन्ददास से बड़े थे। बचपन में .ी नन्ददास के पिता का स्वर्गवास हो गया था। नन्ददास और तुलसीदास दोनों ने सोरों में रहकर रामानंदी सम्प्रदाय के नरसिह देव पण्डित से संस्कृत की शिक्षा ली थी नन्ददास के एक सगे भाई चन्द्रदास थे जिनके बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती।

प्रारम्भ में नन्ददास भी तुलसीदास की तरह राम भक्त थे। वे काशी में तुलसीदास जी के साथ ही रह रहे थे। एक बार काशी से कुछ यात्रियों का दल द्वारकापुरी की यात्रा के लिये जा रहा था नन्ददास ने भी तुलसीदास जी से द्वारकापुरी जाने की आज्ञा माँगी। किन्तु तुलसीदास ने यह कह कर मना कर दिया कि यह लम्बी यात्रा है इसमें तुमको कष्ट हो सकता है। किन्तु नन्ददास को यह बात अच्छी नहीं लगी और वे उस दल से विछुड़ कर द्वारकापुरी होते हुए सिहनाद ग्राम में पहुँचे। वहाँ पर वे भिक्षा द्वारा अपना पोषण करने लगे। उस गाँव में एक साहूकार रहता था। नन्ददास जब उसके घर भिक्षा माँगने गये तो उनकी नजर साहूकार की स्त्री पर पड़ गयी। वह स्त्री बड़ी रूपवती थी नन्ददास उस पर ऐसे मोहित हो गये; कि प्रतिदिन उसके घर के चक्कर काटने लगे। वे जब तक उस स्त्री का मुख न देख लेने तब तक उनको चैन नहीं पड़ता था। नन्ददास के इस कृत्य को देखकर उस स्त्री के घर वाले अपनी बदनामी के डर से दुखी होने लगे। इसलिये एक दिन नन्ददास से पीछा छुड़ाने के लिये उस स्त्री के घर वाले स्त्री को साथ लेकर ब्रज की यात्रा के लिए निकल पड़े। जब वह लोग गोकुल में आये तो उनका पीछा करते हुए नन्ददास भी वहीं आ पहुँचे। इनको देख कर उस स्त्री के घर वालों ने अपने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कष्ट की व्यथा गो० विठ्ठलनाथ जी को सुनाई। गो० विठ्ठलनाथ जी ने नन्ददास को अपने समीप वुलवा कर अनेक प्रसंगों पर उनसे बातचीत की। उनके उपदेशों का नन्ददास के ऊपर काफी प्रभाव पड़ा। तुरन्त ही उनके मन की भावना बदल गयी। सं० १६०७ में उनसे भगवत नाम की दीक्षा लेकर नन्ददास सच्चे भक्त बन गये। नन्ददास वैष्णवों के साथ मिलकर कीर्तन मंडल में सम्मिलित हो गये।

जिस समय नन्ददास के वारे में यह समाचार उनके वड़े भाई गो० तुलसीदास जी को ज्ञात हुआ तो उन्होंने एक पत्न में नन्ददास को लिखा कि तुमने अपना पतिव्रत धर्म क्यों खो दिया। अपने स्वामी तो श्री रामचन्द्र ही हैं। उनको छोड़ कर तुमने श्रीकृष्ण उपासना किस लिये की है। जव यह पत्न नन्ददास को मिला तो उन्होंने उत्तर में निम्न पद लिख कर भेजा—

"पतिव्रत की बात सु सोच न विचार कही—
रामचन्द्र एक पत्नी को व्रत धारयौ है।
ताहू की सम्हार करि सकै नाहिं सीतापति—
रावण लै गयौ लंक सुजस प्रचारयौ है।
कृष्ण हैं अनेक अवलान के सु स्वामी भ्रात—
ताही करि मैंने यह तन मन वारयौ है।
सोई धन धन्य भाग्यवान जन भूतल में—
कृष्ण पुनि कृष्ण नाम मुख सौं उच्चारयौ है।"

नन्ददास का यह पत्न पाकर तुलसीदास ने अपने मन में यह विश्वास कर लिया कि नन्ददास अब यहाँ आने वाले नहीं हैं। यह विचार कर वे अपने भाई से मिलने के लिये व्रज में आये और यमुना स्नान करके राम मन्दिर में दर्शनों के लिये गये। इसके बाद व्रज वासियों से नंददास का पता पूछने लगे। तब व्रज वासियों ने उनसे कहा —

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"बोले ब्रजवासी सुनि राम के उपासी संत,
नंददास नेह बृजनाथ सों लगायौ है।
तु है कहाँ भ्रात वाको, समझ ना परै बात,
कौन देशवासी औ कहाँ ते चलि आयौ है।
देखि गिरिराज साम्हैं जतीपुरा ग्राम तामें,
मन्दिर श्रीनाथ कौ जगत जनायौ है।
'सरस' जु सूधौ बिन बूझें ही चलौजा तहाँ,
"अष्टछाप" वारौ नन्ददास नाम पायौ है।"

× × ×

सुनि ब्रज वासिन के वचन सरल सरस सुख पाइ।
चलन लगे गौपाल पुर तुलसि दास हरसाइ॥
लखत लखत सोभा सरस रटत राम कौ नाम।
तुलसी दास गोपाल पुर जाय कियौ विश्राम॥

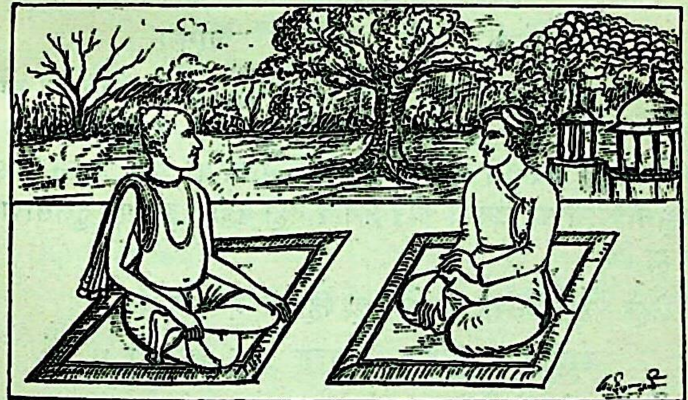

~ नन्ददास और तुलसीदास जी की वार्ता ~

इस प्रकार तुलसीदास जी नंददास जी के पास तक पहुँचे और वहाँ जाकर हर प्रसंग में तुलसीदास ने उनको अपने साथ ले चलने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को कहा। तुलसीदास ने कहा कि यदि तुम ग्राम में निवास करना चाहो तो अयोध्या चलकर रहो। यदि नगर में रहना है तो काशी में चलो। यदि पहाड़ पर रहना है तो चित्रकूट चलो और यदि वन में रहना है तो दंडक वन में चलो। किन्तु नन्ददास को उनकी एक भी बात अच्छी नहीं लगी। नन्ददास ने उत्तर दिया—

जो गिरि रुचि तौ वसों गोवर्धन
ग्राम रुचि तौ वसौं श्री नन्द ग्राम।
नगर रुचि तौ वसों श्री मधुपुरी
शोभा सागर अति अभिराम।
सरिता रुचि तौ वसों यमुना तट
सकल मनोरथ पूरन काम।
नन्ददास काननहिं रुचि तौ
वसों भूमि वृन्दावन धाम।

इस भाव को सुनकर तुलसीदास नन्ददास से बोले कि भाई ऐसा कौनसा पाप है जो तुम राम जी के नाम पर टेढ़े पड़ते हो। तुलसीदास ने नंददास को अपने साथ में चलने को बड़ा प्रयत्न किया किन्तु नन्ददास पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इस पर तुलसीदास ने कहा कि—

दोहा—राम भक्ति ब्रज में नहीं हिय में प्ररयौन चैन।
डाढ़ी मूछ सम्हार कै, आक ढाक अरु कैरु॥
कृष्ण कृष्ण ही कह रहे आक, ढाक और कैरु।
तुलसी या ब्रज में कहा सियाराम सों बैर॥

जब तुलसीदास जी ने चारों ओर अपने प्रतिकूल वातावरण देखा तो आश्चर्य से श्रीनाथ जी का गुणगान करने लगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पद—व्रज है व्रजनाथ श्रीनाथ जी विराजै यहाँ
भक्ति भावना सौ जीव मात्र ओत-प्रोत है।
जित देखों तित ही पहाड़ पेड़ कुंजन में
कन-कन कन्हैया की जगमग जोत है।
भोरे व्रजवासी दधि चोर के उपासी सबै,
कृष्ण-कृष्ण ही सों उन्हें नातौं और गोत है।
तुलसी विचारें मेरे राम कौ न नाम यहाँ,
जै श्रीकृष्ण, जै श्रीकृष्ण जै श्रीकृष्ण होत है।

इसके वाद जव नन्ददास श्रीनाथ जी के मन्दिर में गये तो तुलसीदास भी उनके साथ चले गये।

जव तुलसीदास दर्शनों में पहुँचे तो वहाँ वड़ी भीड़ थी।

कवित्त - होत धकापेल तहँ भीर वहु भक्तन की।
कोऊ आत जात कोऊ निरखें ठड़े ठड़े॥
श्री मुख श्री नाथजी कौ देखि जन भूले सव।
मोहे रूप जाल गिरधारी के वड़े वड़े॥
करत प्रनाम कोऊ दोऊ कर जोरे भोरे।
करत डंड़ौत कोऊ औंधे ही पड़े पड़े॥
तुलसी विमोहे तऊ शीश न झुकायौ तहाँ।
राम के अनन्य भक्त भारी हैं वड़े कड़े॥

किन्तु राम के अनन्य भक्त होने के कारण उन्होंने श्रीनाथ जी को नमन नहीं कियौ।

नन्ददास की प्रार्थना सुनकर श्रीनाथजी ने राम के रूप में तुलसीदास जी को दर्शन दिया।

दोहा—कहा कहूँ छवि आपकी भले बने हौ नाथ।
तुलसा मस्तक तव नवें धनुष वाण लेउ हाथ॥

इस भाव के दर्शन करके तुलसीदास वोले—

दोहा—कित मुरली कित चन्द्रिका कित गोपिन कौ साथ।
अपने जन के कारणें कृष्ण भये रघुनाथ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(तुलसीदास नन्ददास से बोले)

कवित्त—नन्ददास तेरे वस भये हैं गोपाल लाल।
कौतुक ही कीन्हों राम रूप धरि लीन्हों है।
राम राम रटत गई है वय मेरी सब;
मंद मुसकात ऐसौ दरस न कीन्हों है।
साची कहि बात कौन भाँत भ्रात पाई निधि;
कौन भाँति तोहि हरि निज कर चीन्हों है।
ध्रुव, अवरीस, प्रहलाद और विभीषण की,
कथा कौ प्रमान तैं प्रतक्ष करि दीन्हों है।

(नन्ददास को भ्रम में डाल कर कहा)

देख्यौ नन्ददास जात औचक ही मन्दिर में,
चारू भई तऊ मुख सौं न वोले है।
तुलसी विचारें यह मुरली कौ कौतुक है,
भूलि गयौ भ्रात बन भटकत डोले है।
राम कौ गुलाम होय भजन न करैं चलि,
चित्रकूट चारू ज्ञान ग्रन्थि नहिं खोले है।
माखन चुरैया सौं लगायौ नेह नाहक ही,
सीता पति साहिब सौं रस नहिं घोलै है।

(नन्ददास ने तुलसीदास से कहा है)

सुनि तुलसी की वात, चौक परे नंददास,
वोले व्रजवास अब, सरवस हमारौ है।
जायौ तुम वेगि चित्रकूट पै निवास करौ;
यह गिरराज मोहि प्रानन ते प्यारो है।
खेलत सदाई यहाँ घोसतिय संग देखि;
लाजत अनंग रूप मोर पंच वारौ है।
धाम मथुरा सौ तिहुँ लोक में न देख्यौ सुनो,
तीर यमुना के कान, जामें अवतारौ है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोहा—अष्टछाप स्थापिके, सेवा सौंपी मोहि ।
जस गाऊ गिरधन के, कहा वताऊँ तोहि ।।
इत गोवर्धन धरन के, सन्मुख श्री नंददास ।
करत, कीर्तन रस भरे, सदा सदा व्रजवास ।।

इसके वाद नंददास गोकुल को चल दिये तो उनके साथ तुलसीदास जी भी चल दिये । गोकुल पहुँच कर नंददास ने गो० विठ्ठलनाथ जी से तुलसीदास का परिचय कराते हुए कहा कि यह मेरे वड़े भाई हैं और राम के अनन्य भक्त हैं उनके सिवा और किसी को नहीं मानते । गो० विठ्ठलनाथ जी ने उनको अपने पास विठाकर उनसे वार्तालाप किया । उस समय गो० विठ्ठलनाथ जी के पाँचवे लालजी श्री रघुनाथ जी का विवाह हुआ था । उन्होंने जानकी जी के साथ आकर तुलसीदास जी को दर्शन दिये । तुरन्त ही तुलसीदास जी ने उनको नमन किया और भावावेष में भक्ति के अनेक पद गाकर सुनाये । कुछ दिन वहाँ रहने के बाद तुलसीदास गोकुल से अपने देश को लौट गये । उनके भाई नंददास वहीं रह गये । सूरदास की प्रेरणा से उन्होंने कमला नाम की कन्या से विवाह भी किया था । जिससे कृष्ण नाम का एक वालक भी उत्पन्न हुआ था । सं० १६०७ में ये 'अष्टछाप' में सम्मिलित किये गये ।

'अष्टछाप' के कीर्तन संग्रह में अन्य कवियों की तरह नंददास के स्फुट पदों का भी महत्वपूर्ण साहित्य उपलब्ध होता है । इनके कई ग्रंथ भी प्रकाशित हुए हैं जिनमें 'भ्रमर गीत' और 'रासपंचाध्यायी' अधिक प्रसिद्ध हैं । अनेकार्थ मंजरी, मान मंजरी, रूप मंजरी, विरह मंजरी, प्रेम वाराखड़ी आदि ग्रंथ भी लोकप्रिय हैं । नंददास के काव्य का साहित्यिक महत्व सर्व विदित है पर उनका धार्मिक महत्व भी कुछ कम नहीं है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नंददास का स्थायी निवास स्थान मानसी गंगा पर ही रहा था। सं० १६४० में मानसी गंगा के निकट पीपल के पेड़ के नीचे आपने यह नश्वर शरीर त्याग दिया।

रसखान की गायन वार्ता

भक्त रसखान का जन्म ऐसे समय हुआ था, जब कि देश में मुगलों का साम्राज्य था। हिन्दू धर्म के प्रति कठोरता का व्यवहार किया जा रहा था। शासक और शासित दोनों जातियों के वीच मत-भेद की दीवार खड़ी थी। लेकिन इसके बावजूद भी अनेक मुसलमानों ने हिन्दू धर्म के प्रभाव में आकर अपने आपको कृष्ण भक्ति के रंग में रंग दिया।

रसखान का जन्म सं० १६०० के आसपास माना जाता है। यह शाही पठान घराने के थे। भक्ति मार्ग में आने से पूर्व यह एक साहूकार के पुत्र पर इतने आसक्त हो गये; कि उस साहूकार के यहाँ नौकरी करके आठों प्रहर उस वालक के रूप माधुर्य की सेवा में रहने लगे। उसकी झूटन से अपनी भूख मिटाते थे। उस लड़के में इतना प्रेम देखकर इनके जाति वन्धु इनसे घृणा करने लगे।

उस समय दिल्ली में चार वैष्णव अपनी भगवत वार्ता कर रहे थे। उसमें एक कह रहा था कि भगवान में इस प्रकार मन लगाना चाहिए; कि जिस प्रकार रसखान की उस साहूकार के पुत्र में आसक्ति है। अपने नाम की इस प्रकार चर्चा सुन कर रसखान उन वैष्णवों के पास पहुँचे; और उन वैष्णवों से प्रश्न किया कि भाई तुम्हारा ईश्वर दीखता तो है नहीं फिर उससे किस प्रकार प्रेम रखा जा सकता है। तब वैष्णवों ने अपने सेव्य स्वरूप में रसखान को श्रीनाथजी का दर्शन कराया और उनके चरित्र का वखान किया। रसखान उस छवि को देखते ही रह गये। उन्होंने उसी समय प्रतिज्ञा की कि जब तक मैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस छवि के भगवान का दर्शन नहीं कर लूँगा तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगा।

उसी रात को रसखान घोड़े पर सवार होकर दिल्ली से मथुरा की ओर चल दिये। प्रातःकाल होते ही आप वेष बदल कर अनेक मन्दिरों में दर्शन करने को गया, किन्तु उस छवि का कहीं दर्शन नहीं हो सका। अब निराश होकर लोगों से पूछने पर गोवर्धन में स्थित गोपालपुर में श्रीनाथ जी के मन्दिर तक जा पहुँचे। जैसे ही अन्दर प्रवेश करना चाहते थे कि सिहपौरिया ने इनका यावनिक चिन्ह देख कर ताड़ना देकर लौटा दिया। उस वियोग की वेदना में व्याकुल होकर रसखान गोविन्द कुण्ड पर जाकर गिर पड़े। भक्त की व्याकुलता देखकर भगवान को स्वयं प्रत्यक्ष होना पड़ा। रसखान ने भावावेश में भगवान को पकड़ने दौड़े किन्तु वह शीघ्र ही अन्तर्ध्यान हो गये।

गो० विठ्ठलनाथ जी के मन में भी भगवान की ऐसी प्रेरणा हुई, कि यह देव पुरुष है किसी प्रकार म्लेच्छ योनि में पड़ गया है। इसको अपनी शरण द्वारा सेवा का अधिकारी बनाइये। इस प्रकार की प्रेरणा होने पर गो० विठ्ठलनाथ जी गोविन्द कुंड पहुँचे और भक्त रसखान को अपने साथ लाकर भगवत नाम की दीक्षा दी। उस समय उत्थापन की झाँकी खुली थी। रसखान ने दर्शन करके वहीं पर प्रसाद ग्रहण किया।

उस समय से भक्त रसखान ने समस्त माया मोह को त्याग कर ब्रजभूमि में बसना स्वीकार किया। वे प्रतिदिन गो० विठठलनाथ जी की भागवत कथा का पारायण सुनते और अनेकों दोहों और सवैयों में प्रभु सेवा का गुण गान करते थे।

इस प्रकार भक्त रसखान ने भगवत सेवा के साहित्य संगीत से भारतीय भक्तों में विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया। लेकिन उनके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सजातीय वन्धुओं को उनके आचरण से बड़ी घृणा होने लगी। उस समय मुगल शासन तो था ही अतः उनके सजातीय वन्धुओं ने वादशाह से शिकायत की कि रसखान ने इस्लाम धर्म छोड़ कर हिन्दुओं का धर्म स्वीकार कर लिया है। वादशाह ने इनको दरबार में उपस्थित करने की आज्ञा प्रदान की। राजाज्ञानुसार इन्हें दरवार में उपस्थित किया गया। उस समय वादशाह ने इनसे वार्तालाप करते हुए पूछा कि तुम्हारा कुट्टन (प्रेमी) कैसा है, क्या करता है, कहाँ रहता है ? आदि तव रसखान ने उत्तर दिया।

"वह घेरन धैनु अवेर-सवेरन, फेरन लाल लकुट्टन की।
वह तीक्षण चच्छु कटाक्षान की छवि, मोरन भोंह भ्रकुट्टन की।
वह लाल की चाल चुभी चित में 'रसखान' संगीत उकुट्टन की।
वह पीत पकुट्टन की फहरान, लट्टकन मोर मुकुट्टन की।"

इस प्रकार रसखान ने जव वादशाह को ज्ञात कराया तो वह संत की वाणी सुनकर हैरान रह गया। उन्होंने जान लिया यह तो भगवान के रंग में रंग चुका है कि जो इस पर अव कोई रंग नहीं चढ़ सकता।

भक्त रसखान उन कवियों में से हैं जिन्होंने अपनी निरंतर साहित्य संगीत वर्षा से जगत को रस रूपी सागर में डुवो दिया है। "इन मुसलमान हरि जनन पै कोटिन हिन्दू वारिये" की उक्ति रसखान पर पूर्ण चरितार्थ हुई है। मुक्तककारों की श्रेणी में तो उनका स्थान प्रथम है। ये हिन्दी साहित्य के यशस्वी और अमर कवि के रूप में अनन्त काल तक जाने जायेंगे।

तानसैन की गायन वार्ता

ग्वालियर से सात मील दूर एक वेहड़ नाम का ग्राम था; जिसमें शिवजी का एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर था। उस गाँव में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मकरन्द पाण्डे नाम का एक ब्राह्मण रहता था, जिसके कोई संतान नहीं थी। एक संत के वताने पर उस ब्राह्मण ने उस मंदिर की मरम्मत करवाई और प्रतिदिन शिवजी पर बेलपत्र चढ़ाकर पूजा करने लगा। भगवान शंकर की कृपा से उसको एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। जिसे त्रिलोचन, तनसुख, तन्ना आदि नामों से पुकारा जाने लगा; वड़ा होकर यही वालक तानसैन के नाम से विख्यात हुआ। जिसे अकवर द्वारा संगीत सम्राट की उपाधि प्रदान की गयी।

तानसैन के जन्मकाल को लेकर विद्वानों में काफी मतभेद हैं, फिर भी इनका जन्म सं० १५७७ के लगभग माना जाता है। क्योंकि सं० १६१३ में अकबर वादशाह हुआ था; और उसने सं० १६२१ के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

लगभग राजा रामचन्द्र वघेला के यहाँ से तानसैंन को अपने दरबार में बुला लिया था। उस समय अकबर अपने दरबार के नवरत्नों में एक संगीत का रत्न भी रखना चाहता था। तानसैन ने जाकर अकबर को सूरदास का एक पद गा करके सुनाया। इससे अकबर बादशाह बहुत प्रभावित हुए और तानसैन के साथ मथुरा आकर सूरदास से मुलाकात की इससे स्पष्ट होता है कि उस समय तक तानसैन भक्त व कवियों की श्रेणी में नहीं थे। बल्कि अन्य भक्त व गायक कवियों की वाणी गाया करते थे।

लेकिन ख्याल गायन और तानों का अविष्कार करने का भी यही कारण है कि उनके लिए साहित्य संगीत के क्षेत्र में उस समय अपनी कला का प्रभाव जमाना दुर्लभ था। इसलिये ख्याल गायन का अविष्कार करके उन्होंने अपने नाम को सार्थक किया।

विधना अस जिय जान कें, शेषहि दिये न कान।
धरा-मेरु सुन डोलती, तानसैन की तान॥

जन्म की ही भाँति तानसैन की मृत्यु के काल को लेकर भी विद्वानों में काफी मतभेद हैं। श्री प्रभुदयाल मीतल के अनुसार तानसैन का निधन सं० १६४६ में आगरा में हुआ। इसको प्रमाणित करती हुई स्वामी हरिदास जी के निधवन में तानसैन की समाधि स्थित है। द्वितीय मत के अनुसार तानसैन की मृत्यु दिल्ली में फरवरी सन् १५८५ ई० को हुई थी और उनकी समाधि ग्वालियर में बनायी गयी। जैसा भी हो पर भारतीय अमर संगीत की त्रिवेणी बहाने वाले इस महान संगीतज्ञ का जन्मस्थल भारत ही है।

इस्लाम धर्म पर भारतीय संगीत का प्रभाव

धर्म का प्रचार एवं प्रसार करने वाले को ही पण्डित और आचार्य कहा जाता है। इस दृष्टि से संगीत सम्राट तानसैन को उच्च-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

— श्रीस्वामी डी.आर.पार्वतीकर —

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कोटि का गायक और संगीतज्ञ ही नहीं बल्कि एक महान पंडित और आचार्य भी मानना पड़ेगा, वह हिन्दुत असाधारण प्रतिभा ने विधर्मियों को अपनी ओर आकृष्ट किया, और भारतीय सगीत में प्रविष्ट होने के लिए विवस कर दिया। जब कि उनके धर्म में संगीत वर्जित था।

जिस समय सम्राट अकबर ने तानसैन को राजा रामचन्द्र बाघेला के दरबार से बुलाकर अपने यहाँ रक्खा, तब तानसैन ने अनेक संतों की वाणी गा गाकर उनको हिन्दु धर्म के प्रति आकृष्ट किया, उस समय संगीत सेवा धर्म के प्रति अकबर को इतनी प्रबल जिज्ञासा बढ़ी कि इस क्षेत्र के महान संगीतज्ञ और साधकों में जो सूरदास जी, कुम्भनदास, श्री हरिदास, गोविन्दस्वामी, गो० विठ्ठल नाथ जी जैसे महापुरुषों के सम्पर्क स्थापित कर उनकी वाणी को श्रवण किया, स्वामी हरिदास जी के दर्शन के लिए तो अकबर तानसैन का दरबान जों हाथ में तानपूरा लेकर जाना पड़ा। और उसने बड़े-बड़े संगीतज्ञों को दरबार में आश्रय दिया। तानसैन की मेघ और दीपक राग की बात प्रसिद्ध थी, क्योंकि उन विधर्मियों पर संगीत की वह वर्षा की जिनके हृदय के ज्ञान रूपी दीपक जल उठे।

जिसमें विधर्मियों ने संगीत वैश्यायों तक सीमित किया ओर मिया तानसैन बनाये, फिर भी उस गायक ने अपनी वंश परम्परा द्वारा संगीत धर्म को उनके धर्म में स्थापित किया। जब से हमारे यहाँ संगीत शिक्षा लोप होती चली गई, क्योंकि तामसी संगीत संगति में हिन्दू अपने धर्म से विचलित होने लगे, वह संगीत आज हमारे स्वतन्त्र राष्ट्र ने युगों बिछड़ी हुई कला जो हमारी पीढ़ी को संगीत अनवार्य बनाया है।

स्वामी पार्वतीकर जी की गायन; वादन वार्ता

भारतीय संत परम्परा से ईश्वर आराधना साहित्य-संगीत के विकास का प्रमुख कारण रही है। ब्रह्मा, शिव, नारद, दुर्गा, कश्यप मतंग आदि अनेक देव, ऋषी एवं सन्त-महात्मा इसके शास्वत प्रमाण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसी परम्परा के अंतर्गत वर्तमान में नादयोगी स्वामी आर० डी० पार्वतीकर जी का स्थान भारत के श्रेष्ठतम साहित्य संगीत साधकों की कोटि में आता है। आपका जन्म १६ जनवरी १९१६ में हैदराबाद स्टेट में हुआ था। आपने अपनी साधना गायन वादन कला श्री सरस्वती वीणा स्वर मंडल दत्तातेय वीणा आदि अनेक सफल प्रयोग हैं। आपकी साहित्य-संगीत सेवा प्राचीन मुनियों की स्मृति को एक बार फिर से ताजा कर देती हैं। भगवत सेवा सम्बंधी सैकड़ों पदों की रचना संगोत साहित्य में ९२०० राग-रानियों के नाम एवं स्वर-लिपि साहित्य का भी प्रयोग कर आपने भारतीय साहित्य एवं सगीत में महान सेवा की है। "अष्टछाप" साहित्य संगीत के अंर्तगत आपको भी मार्ग दर्शन प्राप्त है। भारतीय साहित्य-संगीत भविष्य में भी आपकी सेवाओं के प्रि आशावान है।

अष्टछाप साहित्य संगीत के अंतर्गत कितने ही वाद्ययंत्रों का प्रयोग है। जिसका विस्तार आवश्यक होने पर लिखा जायेगा। इस प्रणाली के प्रयोग में स्वामी जी का बाल्यवस्था से संगीत द्वारा भगवान के कीर्तन में अति सम्मान जन्म जात था।

आपके पिता इन्हें हैराबाद में संत संगीतज्ञ श्री नादानंद जी से शिक्षा प्राप्त करने भेजा। नादानद जी के पिता श्री गोविन्द शर्मा जी बड़ौदा स्टेट में पुष्टि कीर्तन सेवा के साथ सगीत शास्त्र के उच्चतम विद्वान भग्वदीय भक्तों की कोटी के संत थे। जिन्होंने कितने ही ग्रंथों का निर्माण किया। इनके पौत्र नादानंद जी हैदराबाद स्टेट में जाकर रहे। इनसे स्वामी पार्वतीकर जी ने संगीत शास्त्र की उच्चम शिक्षा प्राप्त की। श्री नादानंद जी १०५ वर्ष की आयु से स्वतंत्र राष्ट्र की संरक्षणता में रहकर संगीत सेवा की है। इस प्रकार बहुत सी प्रतिभायें इस भूमि में जागृत हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और अन्त में...

प्रिय पाठकगण

आज वैशाख कृष्णा एकादशी का दिन "अष्टछाप" के प्रवर्तक महाप्रभु बल्लभाचार्य जी का जन्म दिवस है। इस पुण्य तिथि के अवसर पर प्रस्तुत पुस्तक महाप्रभु जी के श्री चरणों में सादर समर्पित करते हुए मन में जहाँ इस बात का अत्यन्त हर्ष अनुभव कर रहा हूँ, वहाँ यह खेद भी कम नहीं है कि कागज की कमी एवं अन्य परिस्थितियों के कारण पुस्तक का कलेश्वर अत्यन्त छोटा करना पड़ा।

फिर भी मुझे अपने कृपालु भक्त पाठकों से आशा है कि वे पुस्तक की अशुद्धियों पर ध्यान न देकर उसके भाव को समझने की कृपा करेंगे।

आपका ही

बच्चू महाराज

शालिगराम मुखिया

[श्री द्वारकाधीश मन्दिर, मथुरा]

दिनांक १६ अप्रेल, १९७४

Dr. Urmila Sharma Collection; Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi